राजकमल विश्व-परिचय-माला

मलय

मलय राज्य संघ का भौगोलिक एवं सामाजिक परिचय

श्रीकृष्णदास

राजकमल प्रकाशन
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

इस पुस्तक-माला का मूल उद्देश्य पाठकों को विश्व के सभी देशों की सामान्य भौगोलिक-सामाजिक जानकारी देना है। विभिन्न देशों पर अलग-अलग पुस्तकें प्रकाशित की जा रही हैं।

क्रम

थाईलैंड
केडाह
कोटाबारु
जार्जटाउन
पेनांग
केलान्तान
त्रैंगानू
दक्षिणी चीन सागर
पेरक
पाहांग
सेलंगार
क्वालालम्पुर
सैंबीलन
मलक्का
जोहोर
जोहोरबारु
सिंगापुर
मलक्का जलडमरूमध्य
सुमात्रा
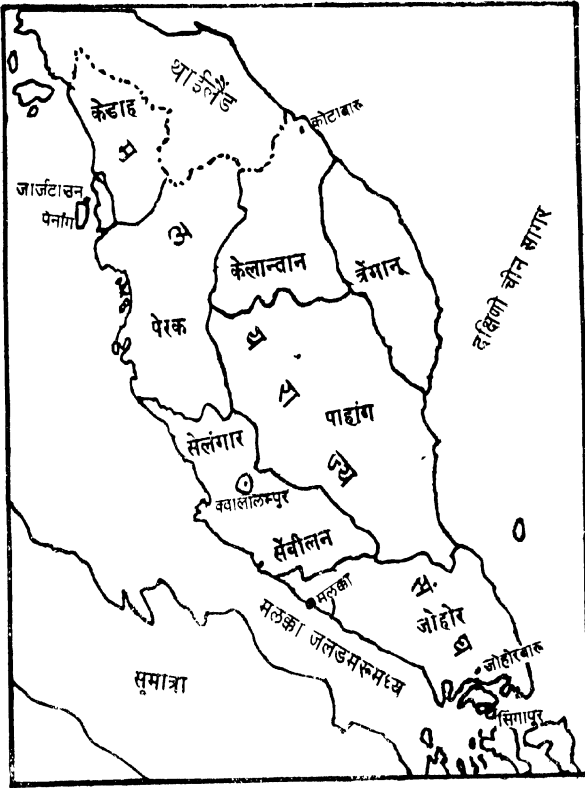
मलय राज्य-संघ

१. सामान्य परिचय

मलय थाईलैंड के नीचे समुद्र से घिरा हुआ छोटा-सा देश है। इसके दक्षिणी छोर पर सिंगापूर का विश्व-प्रसिद्ध और अत्यन्त महत्वपूर्ण बन्दरगाह है। द्वितीय युद्ध के पहले मलय में नौ राज्य थे। साथ ही सिंगापूर, पेनांग और मलक्का की बस्तियाँ भी थीं। ये बस्तियाँ अंग्रेजों का उपनिवेश थीं। नौ राज्यों में से चार ने मिलकर मलय राज्य-संव बना लिया था। सन् १६४१ में जापानियों ने मलय पर आक्रमण किया और उसे १६४५ ई० तक अपने अधिकार में रखा, उसी समय सिंगापूर अलग हो गया और सीधे सम्राट् के अन्तर्गत आ गया। अब सिंगापूर के अतिरिक्त सम्पूर्ण मलय राष्ट्र का एक संघ बन गया।

मलय देश के बीच, रीढ़ की हड्डी की तरह ऊँचे पहाड़ हैं जिनकी समानान्तर श्रेणियाँ दोनो ओर चलती हैं। पश्चिमी भाग पूर्वी भाग से अधिक उन्नत, विकसित एवं समृद्ध है। पश्चिमी घाटियों में ही टीन की खानें हैं। संसार के कुल टीन का तिहाई से अधिक केवल मलय देश में होता है।

मलय देश विषुवत् क्षेत्र में पड़ता है। इस देश में जितने भी पहाड़ हैं वे जंगलों से ढके हुए हैं। इस सदी के आरम्भ में विशेषज्ञों को पता चला कि यहाँ की आबहवा रबड़ के पेड़ों

के लिए अत्यन्त अनुकूल है। तब से यहाँ रबड़ के बागों की संख्या बहुत अधिक बढ़ गयी। मलय देश का बहुत बड़ा क्षेत्र

मलय का सिंह

रबड़ के बागों से घिरा हुआ है। संसार में कुल जितना रबड़ होता है उसका आधा अकेले मलय देश में होता है।

मलय देश में नारियल और ताड़ के बाग भी बहुत हैं।

इन बागों का क्षेत्र भी बढ़ता जा रहा है। अब तो ताड़ से तेल भी निकाला जाने लगा है। मलय देश में चावल ही मुख्य खाद्यान्न है, पर इतना नहीं होता कि सम्पूर्ण देश का काम चल जाये। इसलिए बाहर से मँगाना पड़ता है।

मलय देश की समृद्धि रबड़ और टीन के कारण है। इन उद्योगों के कारण विदेशियों का ध्यान इस देश की ओर गया और उन्होंने इसे अपने प्रभाव-क्षेत्र में लाने की लगातार कोशिशें कीं। अंग्रेजों ने तो इसे अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया था। आज मलय देश में उत्तर से दक्षिण तक रेल की पटरियाँ बिछी हुई हैं और मोटर की भी बहुत अच्छी सड़कें बनी हुई हैं। इन रेलों का सम्बन्ध थाईलैंड से भी है। इनसे सामान लादकर सिंगापुर पहुँचाया जाता है और वहाँ से बाहर जाता है।

मूल मलयवासियों की संख्या चीनियों और भारतीयों की सम्मिलित संख्या से कम है। मलयवासी मुसलमान हैं। वहाँ जो भारतीय प्रवासी हैं वे अधिकतर मजदूरी करते हैं। उनमें से थोड़े से लोग सूद-ब्याज का काम भी करते हैं। मलय देश का अधिकतर उद्योग-धन्धा वहाँ पर रहनेवाले चीनियों के हाथ में है। उद्योग, व्यापार, वाणिज्य और ब्याज पर रुपये चलाने का काम ये चीनी लोग करते हैं। इनकी संख्या कुल आबादी का लगभग आधा है।

मलय देश का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण नगर क्वालालम्पूर है। इसकी आबादी ३,००,००० है। यही इस राज्य की राजधानी भी है। यद्यपि यहाँ का व्यापार सिंगापूर और पेनांग द्वीपों से ही होता है, परन्तु राजनीतिक दृष्टि से क्वालालम्पूर का ही महत्व सर्वाधिक है।
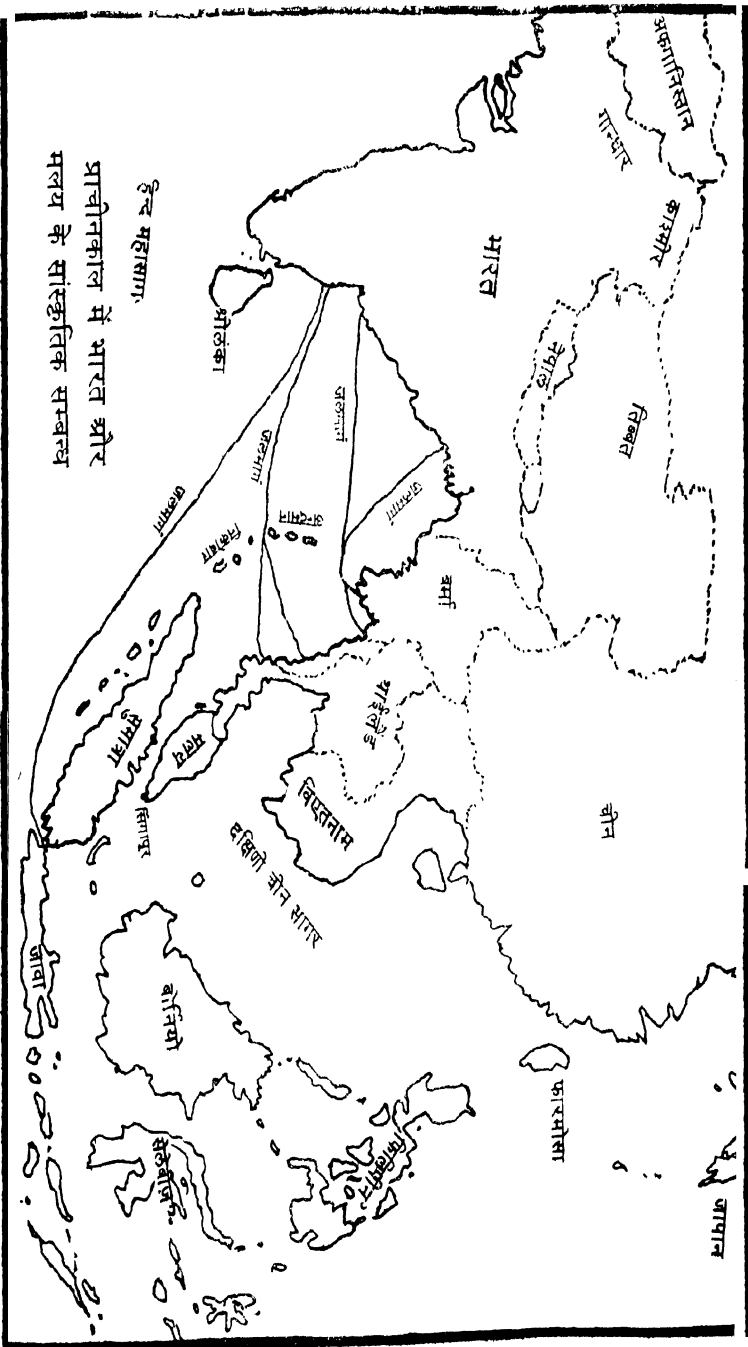
प्राचीनकाल में भारत और
मलय के सांस्कृतिक सम्बन्ध

२. प्राचीन इतिहास और संस्कृति

भारत और मलय देश का सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध लगभग दो हजार वर्ष पुराना है। संस्कृत साहित्य में जिस स्वर्णभूमि अथवा स्वर्णद्वीप की चर्चा है वह यही भूखण्ड है। इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि भारत के व्यापारी ईसा की पहली शताब्दी से ही इस क्षेत्र में आने और व्यापार करने लगे थे। धीरे-धीरे भारत के राज्यकुलों और शासकों का भी ध्यान इधर आकृष्ट होने लगा और वे इन क्षेत्रों में अपने साम्राज्य के विस्तार अथवा उपनिवेश बनाने की बात सोचने लगे।

छठवीं शताब्दी के चीनी इतिहास में फुनान राज्य का वर्णन आता है। फुनान राज्य के अन्तर्गत एक राज्य था लांग-या-हिशू। इस राज्य की ओर से चीन में राजदूत भेजे गये थे। उनमें से एक राजदूत का वर्णन है कि "हमारे देशवासियों का कथन है कि हमारे राज्य की स्थापना चार सौ वर्ष पहले हुई थी।" अर्थात् पहिली शताब्दी ईसवी में इस राज्य की स्थापना हुई थी; और इसकी स्थापना भारतीयों द्वारा की गयी थी। मलय और जावा के प्राचीन इतिहास में जिस लंकाशुक राज्य का वर्णन आता है, उपर्युक्त क्षेत्र वही था। आज के मलय राज्य का केडाह और पेरक का क्षेत्र वही है। पिछले वर्षों में जो

केडाह से प्राप्त बुद्ध की कास्य प्रतिमा—गुप्तकालीन

खोदाई इन क्षेत्रों में हुई है उनमें बुजंग नदी के किनारे ईंट की इमारत मिली है। इस इमारत के नीचे बुद्ध भगवान की साढ़े आठ इंच की अत्यन्त सुन्दर प्रतिमा मिली है। विद्वानों ने इस मूर्ति का अध्ययन करके बताया है कि यह चौथी शताब्दी की और अमरावती कला तथा गुप्त कला के बीच की प्रतीत होती है। पेरक की टीन की खानों में भी बुद्ध की दो पीतल की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। केडाह के समुद्र-तट पर जो खोदाई हुई है वहाँ बौद्ध स्तूप और बौद्ध धर्म-ग्रन्थों से उद्धृत शिला-लेख भी प्राप्त हुए हैं। एक लेख के अक्षर चौथी शताब्दी के दक्षिण भारतीय अक्षरों से मिलते हैं और दूसरे के अक्षर संस्कृत के महायान बौद्ध धर्मग्रन्थों के अक्षरों से।

लंकाशुक अथवा इस क्षेत्र के तत्कालीन निवासियों के वस्त्राभूषणों का वर्णन चीनी ग्रन्थों में इस प्रकार है—"यहाँ के स्त्री-पुरुषों के बाल लम्बे होते हैं। वे खुले ही रहते हैं। ये लोग बिना बाँह के लम्बे कपड़े पहिनते हैं। इनके कपड़े सूत के बने होते हैं, जिन्हें वे 'कान-मान' कहते हैं। सम्राट् और सामन्त लाल रंग का एक कपड़ा और पहिनते हैं जो कन्धे से लटकता रहता है। ये लोग अपनी कमर में सुनहरी डोरी बाँधते हैं

श्रौर कानों में सोने का कुण्डल धारण करते हैं। सामन्तों श्रौर ऊँची श्रेणी की स्त्रियाँ कीमती दुपट्टा श्रोढ़ती हैं। इन दुपट्टों में जवाहरात जड़े होते हैं। इस नगर की दीवारें ईंट की बनी हुई हैं। घरों में दोहरे दरवाजे होते हैं। छतें ऊँची होती हैं। राजा हाथी पर बैठकर श्रपने महल से बाहर निकलता है। उसके सिर पर श्वेत छत्र लगा रहता है। सामने ढोल बजते रहते हैं श्रौर झण्डे लहराते रहते हैं। वह श्रपने सैनिकों से घिरा होता है।"

यही नहीं, तत्कालीन सामाजिक जीवन के श्रनेक वर्णन हमें मिलते हैं जिनसे जनता के रहन-सहन श्रौर धार्मिक विश्वासों का पता चलता है। एक वर्णन है कि यहाँ पर दाह-क्रिया बौद्ध परिपाटी के श्रनुसार होती थी। दाह के बाद श्रस्थियों को प्रवाहित कर दिया जाता था। कभी-कभी शव को चिड़ियों के भक्षण के लिए भी छोड़ दिया जाता था।

चौथी-पाँचवीं शताब्दी में, चीनी वर्णनों में, थाईलैंड की खाड़ी में पातालुंग क्षेत्र में एक दूसरे राज्य का वर्णन श्राता है। संस्कृत में इसे श्ररुण-भूमि श्रथवा रक्त-भूमि कहते थे। इस क्षेत्र को चीनी लोग त्शी-ताउ कहते थे। कुछ समय पहले वेलेज़ली प्रान्त के उत्तरी भाग में एक शिलालेख मिला है। इस लेख में एक बुद्ध-वाक्य उत्कीर्ण है। साथ ही लोहित भूमि के नाविक बुद्धगुप्त की सफलता की कामना भी की गयी है।

चीनी वर्णनों में दो श्रौर राज्यों की चर्चा श्राती है---एक है ताम्रलिंग, जिसकी राजधानी लीगोर थी। मलय प्रायद्वीप के पूर्वी किनारे पर यह श्रवस्थित था। इसे श्रब नाकोनश्री-तम्राट कहते हैं। यहीं पर एक संस्कृत लेख मिला है जो कि

६०वीं शताब्दी का है। इसी क्षेत्र का वर्णन बौद्ध 'निद्देश' में भी मिलता है। उसमें तम्ब-लिंगम् शब्द आया है जिससे प्रमाणित होता है कि इस राज्य की स्थिति दूसरी शताब्दी ईसवी में भी थी।
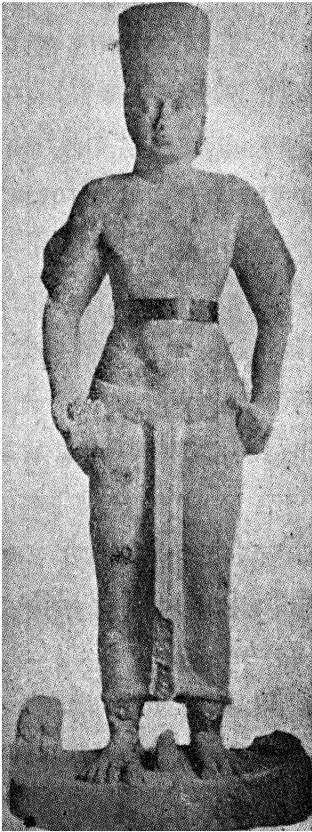
लोकेश्वर पाल शैली

भगवान विष्णु—पल्लव शैली

दूसरा स्थान तक्कोला है। इसका भी वर्णन बौद्ध साहित्य मिलिन्दपन्ह में आता है। क्रा जल-डमरूमध्य में त्रांग एक स्थान है। यही से फूनान राज्य का राजदूत तीसरी शताब्दी में भारत भेजा गया था। लियांग ने अपने

चीन के इतिहास में कहा है कि फूनान में भारतीय कला और संस्कृति एक अन्य छोटे राज्य पान-पान से चलकर आयी। यह निश्चय है कि फुनान, दारावती तथा मलय देश के अन्य राज्यों के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध थे। इन तीनों में गुप्तकालीन बौद्ध मूर्तियाँ समान रूप से मिलती हैं।

अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में जवाहरलाल नेहरू ने कहा है : "इन उपनिवेशों में निवास करनेवाली जातियों से भारतवासियों का मेल-जोल बढ़ा और दोनो में समन्वय भी हो गया। व्यापारियों के साथ ही यहाँ कुछ क्षत्रिय राजा, कुछ सामन्ती परिवार तथा कुछ साम्राज्य-विस्तार के इच्छुक शासक भी पहुँच गये थे। कहते हैं कि इनमें से कुछ लोग प्रसिद्ध मालव जाति के थे। इसी से वह प्रसिद्ध मलय जाति बनी जिसने इण्डोनेशिया में इतने बड़े कारनामे कर दिखाये। मध्यभारत का एक भाग अब भी मालवा कहा जाता है। यह माना जाता है कि आरम्भिक काल में कलिंग से आकर लोगों ने उपनिवेश बसाने की कोशिश की थी। परन्तु सबसे अधिक प्रयास जिस राज्य ने किया वह था दक्षिण भारत का हिन्दू पल्लव राज्य। यह भी माना जाता है कि जिस प्रसिद्ध शैलेन्द्र परिवार ने दक्षिण-पूर्व एशिया में इतना नाम कमाया और अपना साम्राज्य बनाया वह कलिंग से ही आया था। इस समय कलिंग देश में बौद्धों को अधिक लोकप्रियता प्राप्त थी, यद्यपि तत्कालीन शासक हिन्दू थे।"

कुछ प्रसिद्ध इतिहासकार इस वंश को कलिंग का, कुछ उत्तर भारत का और कुछ मैसूर के गंग परिवार से सम्बद्ध बताते हैं।

मलय देश में तथा आस-पास के राज्यों में पहिले हिन्दुओं का आधिपत्य था, बाद में धीरे-धीरे वहाँ बौद्धों का आधिपत्य भी आरम्भ हुआ। बहुत दिनों तक दोनो साथ-साथ चलते रहे। बाद में इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि बौद्ध और हिन्दू राजाओं में युद्ध भी हुए और ये युद्ध दीर्घकालीन तथा कठोर भी थे।

आरम्भिक काल में ये भारतीय उपनिवेश छोटे और दूर-दूर बसे हुए थे। धीरे-धीरे इनका विस्तार होने लगा। इनका पूरा युग पहिली शताब्दी ईसवी से १५वीं शताब्दी ईसवी तक माना जाता है। पाँचवीं शताब्दी तक आते-आते अनेक भव्य और विशाल नगरों का निर्माण होने लगा। आठवीं शताब्दी से साम्राज्यों का निर्माण और विकास होने लगा। ये साम्राज्य पूर्णतया संगठित और शक्ति-सम्पन्न थे। इनका आधिपत्य समुद्र-पार के राज्यों और दूर तक बिखरे हुए द्वीपों पर भी था। इसी समय शैलेन्द्र साम्राज्य का उदय हुआ।

हिन्दू देवता

परन्तु शैलेन्द्र साम्राज्य के उदय से पहिले मलय, कम्बोडिया और जावा में शक्तिशाली राज्यों की स्थापना हो चुकी थी। मलय प्रायद्वीप के उत्तरी भाग में थाईलैंड की सीमा के पास जो खोदाई हुई है उससे शक्तिशाली राज्य का पता चला है।

यह भी प्रमाण मिला है कि उस समय वह देश धन-धान्य से पूर्ण था और सुख-समृद्धि का साम्राज्य था। चम्पा (अनाम) में पाण्डुरंगम् नाम का नगर था, जो तीसरी शताब्दी में अपनी समृद्धि एवं सम्पदा के लिए प्रसिद्ध था। पाँचवीं शताब्दी में कम्बोज नाम का बहुत विशाल नगर निर्मित हुआ। नवीं शताब्दी में जयवर्मन नामक शासक ने कम्बोज साम्राज्य का संगठन किया और अंगकोर को अपनी राजधानी बनाया। यह कम्बोज साम्राज्य लगभग चार सौ वर्षों तक कायम रहा। जयवर्मन, यशोवर्मन, इन्द्रवर्मन और सूर्यवर्मन नाम के इस साम्राज्य के चार महान शासक हुए। अंगकोर की ख्याति सारे एशिया में फैल गयी। लगभग दस लाख नागरिक इस नगर में निवास करते थे। यह साम्राज्य १३वीं शताब्दी तक रहा। शैलेन्द्रों से इनका संघर्ष भी हुआ था।

प्रसिद्ध विद्वान रमेशचन्द्र मजूमदार ने इस सम्बन्ध में जो कुछ कहा है उसे निम्नांकित छह भागों में बाँटा जा सकता है: (१) ७७५ ई० के लगभग मलय देश या कम-से-कम लिगोर श्री विजय साम्राज्य का एक हिस्सा था। (२) इसके कुछ ही समय बाद इसी क्षेत्र में हम एक ऐसे शासक को पाते हैं जो शैलेन्द्र तो है परन्तु वह श्री विजय परिवार का नहीं है। (३) ७८२ ई० तक शैलेन्द्र सम्राटों ने यव-द्वीप के ऊपर अपना आधिपत्य जमा लिया था। (४) अरब के यात्री सन् ८४४ ई० के लगभग 'ज़बग' नाम के अत्यन्त शक्तिशाली साम्राज्य को जानते थे, जिसकी राजधानी लिगोर क्षेत्र में थी। इसका शासक हमेशा महाराजा कहा जाता था। (५) देवपाल के शासन काल के ३९वें वर्ष ८५० ई० का जो नालन्दा ताम्रपत्र प्राप्त हुआ है उसमें

तीन शैलेन्द्र पीढ़ियों की चर्चा मिलती है। पहिला यव-भूमि का शासक कहा गया है और तीसरा सुवर्ण-द्वीप का। (६) पहिले ज़बग में लिगोर क्षेत्र ही आता था। बाद में उसमें मलय देश

नाग सिंहासन पर स्थित बुद्ध की प्रस्तर मूर्ति

और अन्य द्वीप-समूह भी शामिल कर लिये गये और उसे भारतीय लोग जयभूमि अथवा सुवर्ण-द्वीप कहने लगे। चीनी लोग इसी क्षेत्र को सान-फो-ची कहते थे। और अन्ततोगत्वा ११वीं शताब्दी में यद्यपि शैलेन्द्रों के हाथ से यव-द्वीप निकल गया, फिर भी वे सुमात्रा और मलय देश पर शासन करते रहे।

शैलेन्द्र साम्राज्य के खंडहरों से अरबों और मुस्लिम-

धर्मानुयायियों के एक शक्तिशाली साम्राज्य का जन्म हुआ। यह नवीन मलय साम्राज्य था और सुमात्रा तथा मलक्का तक फैला हुआ था। अब इस पूरे क्षेत्र में समुद्र का आधिपत्य अरबों के हाथ में चला गया। मलक्का व्यापार और राजनीतिक सत्ता का बहुत बड़ा केन्द्र बन गया और मलय प्रायद्वीप तथा अन्य आस-पास के द्वीपों पर इस्लाम धर्म का रंग छा गया। पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में इन्हीं अरबों ने मजापहित साम्राज्य का विनाश किया। परन्तु कुछ ही समय बाद सन् १५११ ई० में अलबुकर्क के नेतृत्व में पुर्तगालियों ने मलक्का पर अधिकार कर लिया। और इस तरह योरपवालों का प्रवेश हुआ।

मलय देश की भाषा, संस्कृति और सभ्यता को तो भारत ने प्रभावित किया ही, वहाँ की शासन-व्यवस्था को भी भारत ने पूरी तरह प्रभावित किया। एक समय था जब कि चम्पा, अंगकोर, श्रीविजय, मजापहित आदि संस्कृत विद्या के केन्द्र थे। इन देशों और साम्राज्यों तथा इनके शासकों के नाम शुद्ध संस्कृत थे। राज्य के समारोह भारतीय ढंग से संस्कृत भाषा में होते थे। सामन्तों की उपाधियाँ और पदवियाँ भी संस्कृत में होती थीं। आज तक थाईलैंड में ही नहीं वरन् मलय देश के मुस्लिम राज्यों में भी यही परम्परा चलती है। इनके पुराने साहित्य में भारतीय पौराणिक कहानियाँ मिलती हैं।

मलय के अनेक स्थलों में बुद्ध की गुप्तकालीन मूर्तियाँ मिली हैं। हिन्दू मूर्तियाँ भी बड़ी संख्या में प्राप्त हुई हैं। लिगोर या श्री-तम्राट के एक मन्दिर में एक लेख मिला है जो पाँचवीं-छठवीं शताब्दी की संस्कृत भाषा में है। उसी नगर के दूसरे मन्दिर में एक दूसरा लेख भी मिला है। इसकी भाषा भी संस्कृत है,

लोकेश्वर की कांस्य प्रतिमा—पाल शैली

मगर यह संस्कृत कम्बोज की ८वीं-९वीं शताब्दी की संस्कृत से मिलती-जुलती है। जो बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं वे दारावती की मूर्तियों से समता रखती हैं। परन्तु हिन्दू मूर्तियाँ उनसे बिल्कुल अलग हैं। विष्णु की एक खड़ी मूर्ति मिली है जो २७ इंच ऊँची है। इसके चार हाथ हैं। ऐसी मूर्तियाँ श्रीतम्राट में अब भी मिलती हैं। ताकुआपा बन्दरगाह के पास, नदी के किनारे घने वृक्ष के नीचे दो हिन्दू देवताओं और एक देवी की मूर्ति अब भी देखी जा सकती है। ये मूर्तियाँ दक्षिण भारत की पल्लव शैली की हैं, जो ७वीं ८वीं शताब्दी की है। बैंकाक संग्रहालय में विष्णु की एक प्रतिमा रखी है जो ४ फुट १० इंच ऊँची है। यह मूर्ति निश्चय ही पल्लव शैली की है। जय प्रदेश के वाटप्राटाट स्थान से लोकेश्वर की २७ इंच ऊँची अत्यन्त भव्य प्रतिमा मिली है जो कि इस बात का प्रमाण है कि उस समय मूर्ति कला अपने चरम विकास पर थी। यह

भगवान विष्णु--भारतीय शैली

बुद्ध की कास्य प्रतिमा——नागपीठिका पर

प्रतिमा ९वीं-१०वीं शताब्दी की मानी जाती है। विश्वास किया जाता है कि इसके निर्माता भारत से आये थे। इस मूर्ति को यज्ञोपवीत भी पहनाया गया है। बोधित्सव की एक तीसरी
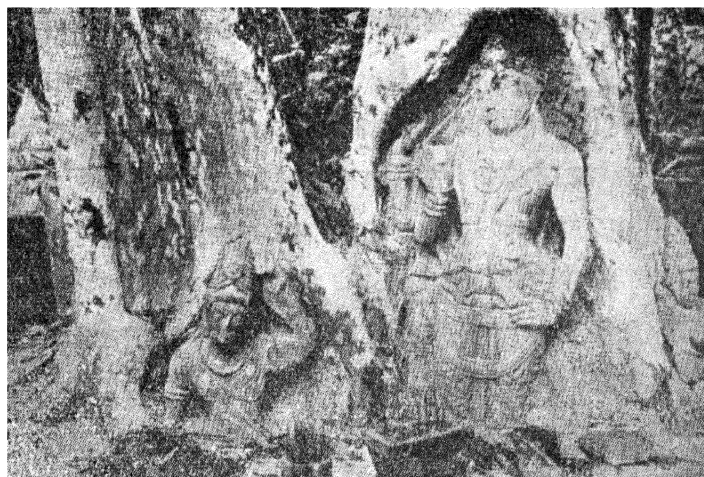
हिन्दू देवताओं की प्रतिमाएँ—पल्लव शैली

प्रतिमा भी है जो बोधगया के त्रिरत्नों से मिलती-जुलती है। इस प्रतिमा में कमल का चिन्ह भी है। दाहिने पाँव के नीचे कमल की पीठिका है। इसके नीचे लेख भी है।

मलय देश में एक और मूर्ति प्राप्त हुई है। यह अत्यन्त आकर्षक एवं महत्वपूर्ण है। कला की दृष्टि से यह बहुत उत्कृष्ट है। यह लगभग चार फुट ऊँची है। यह काले काँसे की बनी है। इस पर सोने का पानी फेरा गया है। यह जयप्रदेश में प्राप्त हुई थी। कुछ लोगों का मत है कि यह किसी नागराज की मूर्ति है। मूर्ति से पीठिका अलग की जा सकती है। यह कहना कठिन है कि मूर्ति और पीठिका की ढलाई अलग-अलग

हुई थी या एक साथ। नाग की पीठिका पर लेख खुदा हुआ है। इसकी भाषा शुद्ध कम्बोज है। जिसका भावार्थ है—"इस मूर्ति का निर्माण करने के लिए महाराजा श्रीमत की आज्ञा से ११०५ शक में ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया वार बुधवार को गृही के शासक महासेनापति गलनाय ने म्रतेन नानो को निमंत्रित किया।" लेख के अन्त में लिखा है कि यह मूर्ति इसलिए निर्मित की गयी कि आस्थावान भक्त लोग उसकी पूजा करें।

इन सब प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि मलय और भारत के बड़े घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं। आधुनिक युगों में ये सम्बन्ध और भी दृढ़ हुए। भारत ही पहिला देश था जिसके राष्ट्रपति ने स्वयं मलय जाकर वहाँ की स्वतन्त्र जनता का अभिवादन किया। जिस समय हमारे राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद क्वालालम्पूर पहुँचे, उनका स्वागत मलयवासियों के साथ भारतीय प्रवासी स्त्री-पुरुषों ने भी उत्साह और समारोह के साथ किया। ६ दिसम्बर १९५८ का वह सुहावना दिन कितना मनोरम, कितना प्रेरणा-दायी था। मलयवासी नागरिकों ने राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद के व्यक्तित्व में अपने उन पूर्वजों को देखा जो दो हजार या बाईस सौ वर्ष से मलय देश को ही अपना देश समझकर वहाँ रह रहे थे। जो भारतीय प्रवासी उपस्थित थे स्नेहवश उनकी आँखों में आँसू छलछला आये थे। जयघोष और गगन को कँपा-देनेवाले राष्ट्रीय नारों ने धीर-गम्भीर राजेन्द्र बाबू को भी आन्दोलित कर दिया। वह भी औपचारिकता का प्रतिबन्ध और संयम तोड़कर स्वजनों के बीच जा मिले।

राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद का स्वागत मलय के सम्राट् तथा प्रधान मंत्री तेगंकू अब्दुलरहमान, मुख्य न्यायाधीश तथा मंत्रियों

ग्रादि ने किया था। ग्रपने भाषण में सम्राट् ग्रब्दुलरहमान ने स्वीकार किया था कि "हज़ारों भारतीय प्रवासी मलय देश के नागरिक हैं। उन्होंने मलय देश के सुख एवं समृद्धि के लिए बहुत कुछ किया है ग्रौर ग्रब भी कर रहे हैं।" उन्होने यह भी कहा कि "भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं धर्म के ग्रगणित प्रमाण ग्रौर उदाहरण मलय देश में दिखायी देते हैं। मलयवासियों के रीति-रिवाजों, लोकाचारों, पूजा-विधियों, धार्मिक विश्वासों एवं ग्रास्थाग्रों पर भारत की छाप है। भारत से ग्रपने प्राचीन सम्बन्ध पर मलयवासियों को गर्व है।"

मलयवासी भारतीयों के हृदय में ग्रपने देश के प्रति गहरी ममता है। ग्रकसर लोग ऐसे हैं जो ग्रपनी समृद्धि ग्रौर सुख के बावजूद भारत वापिस लौटना चाहते हैं। परन्तु इन प्रवासियों का विशाल जन-समुदाय ग्रपने को सच्चे ग्रर्थ में मलय का नागरिक समझता है। पीढ़ियों से वह मलय देश में रहता ग्राया है। वह मलय देश की नीति-रीति ग्रौर संस्कृति के रंग में ग्रपने को रँग चुका है। वह मलय देश में रहना चाहता है। वहाँ के संघर्षों एवं जीवन में मलयवासियों का साझीदार ग्रौर सहयोगी बनना चाहता है। वह पूर्णरूपेण मलय देश को स्वदेश समझता है।

३. अंग्रेजी राज (१७८६-१६५७)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की यह इच्छा थी कि फ्रांसीसियों से जो युद्ध उस समय चल रहा था उसमें टूटे और मरम्मत के योग्य जहाजों को फिर से काम लायक बनाने के लिए बंगाल की खाड़ी में उसे कोई स्थान मिल जाये। वहाँ से बार-बार बम्बई जाना असुविधाजनक था। कम्पनी की यह भी इच्छा थी कि सुदूर-पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व के देशों से व्यापार करने के लिए कोई अच्छा बन्दरगाह मिल जाये। इस समय इस क्षेत्र में व्यापार-वाणिज्य बढ़ाने के लिए यह अत्यावश्यक था। इसलिए सन् १७८६ ई० में कम्पनी की ओर से कप्तान फ्रांसिस लाइट ने केडाह के मलय सुल्तान से पेनांग खरीद लिया। उस समय पेनांग में कोई बस्ती न थी। कुछ दिनों सुल्तान ने कम्पनी के हाथ मलय की भूमि का वह हिस्सा जिसे वेलेज़ली कहते हैं, बेच दिया। परन्तु पेनांग खरीदने से कम्पनी पर बोझ बहुत अधिक बढ़ गया, लाभ कम हुआ। बहुत कम व्यापारी मलक्का होकर वहाँ जाना पसन्द करते थे, क्योंकि रास्ते में जल-दस्युओं का आतंक था।

सन् १८१६ ई० में, जिस समय लार्ड हेस्टिंग्ज़ भारत के गवर्नर-जनरल थे, कम्पनी के दूसरे प्रतिनिधि ने पेनांग से अच्छे स्थान सिंगापूर में बन्दरगाह बनाने की अनुमति माँगी।

जोहोर के सुल्तान से यह अड्डा खरीद लिया गया। डचों ने इसका जोरदार विरोध किया। परन्तु अंग्रेज़ न माने। सिंगापूर आबाद होने लगा। उसकी समृद्धि बढ़ने लगी। तबसे आज तक सिंगापूर इस क्षेत्र का आयात-निर्यात का सब से महत्वपूर्ण व्यावसायिक केन्द्र है। बाल्टिक तथा मूरमांस्क से जो जलमार्ग चीन और जपान को जाता है, सिंगापूर ठीक उसी पर पड़ता है। मलय तथा ईस्ट-इण्डीज़ के देशों के बीच व्यापार का भी यह सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र है।

जिस समय इस अड्डे को अधिकार में लेकर उन्नत किया गया, यहाँ कोई स्थानीय उद्योग-धन्धा न था। धीरे-धीरे यहाँ टीन का निर्माण होने लगा। टीन के अतिरिक्त यहाँ कोई अन्य उद्योग नहीं है। सिंगापूर के वैभव का कारण वहाँ से होकर आने-जानेवाले जहाजों की आमदनी ही है। योरप, अमेरिका, जापान, चीन आदि से लदकर माल यहाँ आता है और छोटे जहाजों में उतारकर मलय, सुमात्रा, पश्चिमी बोर्नियो, बर्मा, थईलैंड और फ्रेंच-इण्डोचाइना तक पहुँचाया जाता है। लौटते समय यही जहाज अपने साथ दूसरे देशों के लिए रबड़, टीन, तेल, काली मिर्च, गरी का तेल, खजूर आदि ले जाते हैं।

सन् १८२४ ई० में अँग्रेजों ने डचों से मलक्का ले लिया। इस प्रकार पेनांग, सिंगापूर और मलक्का—ये तीनों अँग्रेजों के अड्डे बन गये। इनका कुल क्षेत्रफल १५४२ वर्गमील था। इन्हीं तीन क्षेत्रों पर अंग्रेजों का सीधा आधिपत्य था, यहाँ के नागरिक ग्रेट ब्रिटेन के नागरिक माने जाते थे। मलय देश के अन्य क्षेत्र नौ संरक्षित राज्यों में बँटे हुए थे और उनमें सुल्तानों का शासन चलता था। इन सुल्तानों से अँग्रेजों ने विभिन्न

अवसर पर समझौते किये, जिनके फलस्वरूप अँग्रेजों के अधिकार घटते गये। धीरे-धीरे सच्चा स्वत्व अँग्रेजों को मिल गया और
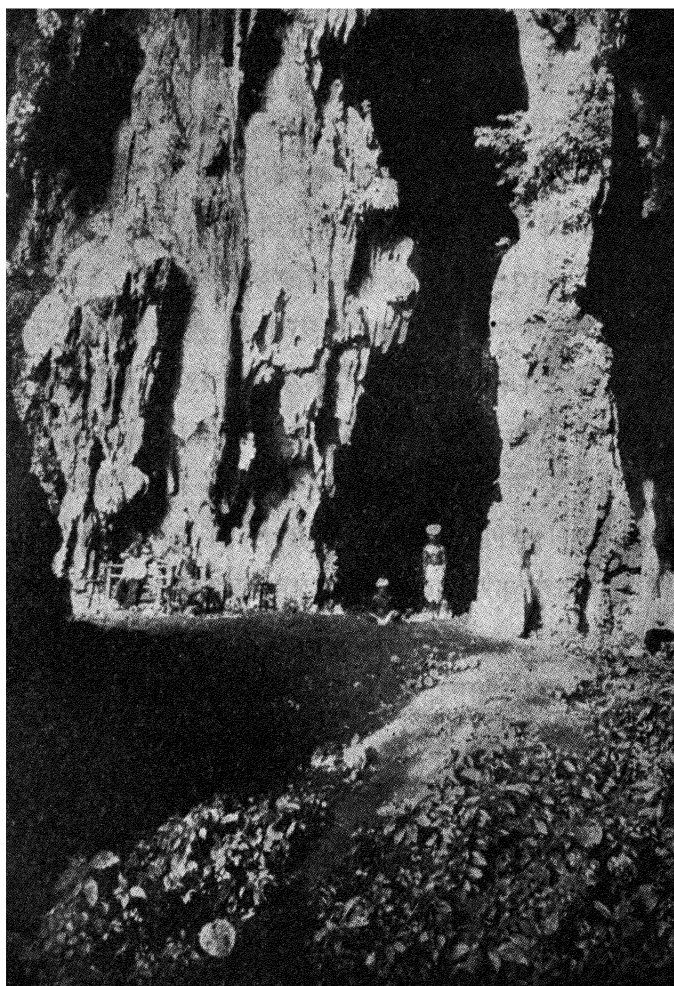
सेलंगार की गुफाएँ

सुल्तान नाम-मात्र के वैधानिक शासक रह गये। सुल्तानों में आपसी झगड़े अक्सर होते रहते थे। इन अवसरों से अँग्रेज लाभ

उठाते थे और बन्दर-बाँट करते थे। सुल्तानों की शक्ति के क्षीण होने से सामन्तों और राजाओं को सिर उठाने का अवसर मिला। इस पर सारे मलय देश में राजनीतिक अस्तव्यस्तता और अराजकता फैली। अँग्रेजों ने इस स्थिति से खूब लाभ उठाया, और अपनी शक्ति बढ़ायी।

अभी तक ब्रिटेन ने यहाँ साम्राज्य-विस्तार की बात नहीं सोची थी। परन्तु १८७४ तक आते-आते ब्रिटिश सरकार ने मलय देश पर अपना अधिकार सम्पूर्ण रूप से करने का निश्चय कर लिया। १८७४ से १६०६ ई० के बीच अँग्रेजों ने सम्पूर्ण मलय देश को अपने अधिकार में कर लिया। हरएक सुल्तान ने अँग्रेजों से सुलहनामा किया और अपने राज-काज में सलाह देने के लिए एक अँग्रेज सलाहकार रखना मंजूर कर लिया। मलय देश के रीति-रिवाजों, लोकाचार अथवा मुस्लिम धर्म में ये सलाहकार हस्तक्षेप नहीं कर सकते थे। अन्य सभी मामलों में हस्तक्षेप करने और अपनी बात मनवा लेने का इन सलाहकारों को पूरा अधिकार था। इस प्रकार अँग्रेज सम्पूर्ण मलय देश के सच्चे शासक बन गये।

युद्ध के पहिले मलय देश का कुल क्षेत्रफल ५२,५२८ वर्ग-मील था। उसमें दस राज्य थे। पेनांग, मलक्का और सिंगा-पूर सीधे ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत थे। इसका गवर्नर ही अन्य नौ राज्यों की देख-रेख करता था। इन नौ राज्यों में से चार—पेरक, सेलंगार, नेग्री सेम्बीलन और पहांग ने मिलकर १८६६ ई० में ही मलय संयुक्त-राज्य का निर्माण किया था। इनके ही पास अधिकतर टीन की खानें और रबड़ के बाग थे। इनमें १६३१ ई० में मलय लोग कुल आबादी का २६

प्रतिशत थे। जो बाकी पाँच राज्य थे उनमें अलग-अलग सरकारें थीं। इनके सुल्तानों ने संयुक्त राज्य में सम्मिलित होना स्वीकार नहीं किया था। मलय का गवर्नर इन राज्यों का सर्वे-

सुल्तान तेगंकू इब्राहिम

सुल्तान सर इब्राहिम

राजा सैयद पुत्र

सुल्तान अबूबक्र

सुल्तान अब्दुलहमीद हलीमशाह

जोहोर का १० सेंट का टिकट

सुल्तान तेगंकू बादशाह

सुल्तान इब्राहिम और सुल्ताना

जोहोर का ३ सेंट का टिकट

सर्वा हो गया। वही कानून बनाता था। और उनका पालन भी करवाता था। वह पूरी तरह सरकार की प्रत्येक शाखा पर हावी था। वह मलय की जनता और सुल्तानों के प्रति

नहीं, केवल अंग्रेजी राज और सम्राट् के प्रति जवाबदेह था। वही सरकारी अधिकारियों, कर्मचारियों, वैधानिक सभाओं और समितियों के सदस्यों को नियुक्त करता था। उसको सलाह देने-वाली एक समिति होती थी। संयुक्त राज्यों की कौंसिल भी होती थी। इनमें बहुसंख्यक अधिकारी होते थे। अल्पसंख्यक गैर-सरकारी सदस्यों की नियुक्ति भी गवर्नर द्वारा होती थी। इन सदस्यों में अँग्रेज, चीनी, भारतीय, योरोपियन सभी होते थे। वाद-विवाद की पूरी आजादी थी। परन्तु गवर्नर की इच्छा के विरुद्ध कोई भी अधिनियम या नियम नहीं बन सकता था।

इस बीच मलय देश में चीन और भारत के नागरिक बहुत बड़ी संख्या में आ बसे थे। इन दोनो की मिली-जुली आबादी मलयवासियों की आबादी से अधिक हो गयी थी। टीन और रबड़ के उद्योग में चीनियों की बहुत बड़ी पूँजी लग गयी थी। उधर अँग्रेजों ने लगभग १६,४०,००,००० डालर की पूँजी इन दोनो उद्योगों में लगा दी थी, जिसकी रक्षा और संवर्द्धन के लिए वे सदैव चिन्तित रहते थे। अतः अँग्रेजों को यह बर्दाश्त न था कि मलय देश में पुरानी सामन्तवादी प्रथा चलती रहे और विकास तथा औद्योगिकरण में सुस्ती दिखायी जाये। जो क्षेत्र विकास कर चुके थे उनमें मलय लोग अल्प-संख्या में थे। वहाँ अँग्रेज और चीनियों की संख्या अधिक थी। जो परिवर्तन आ रहा था उसमें अपने को खपा लेना मलय-वासियों के लिए आसान न था। वे खेतिहर होने के कारण सामन्त-वादी वातावरण के अभ्यासी थे और अपनी रूढ़ियों और पर-म्पराओं को छोड़ना नहीं चाहते थे। उनको समझा-बुझाकर अँग्रेज अपना काम नहीं चला सकते थे। एक तरफ अँग्रेजों और

चीनियों ने स्कूल-कालेज खोले, आधुनिक शिक्षा का प्रबन्ध किया और बीमारियों, विशेषतया मलेरिया की रोक-थाम की। इनका प्रयास था कि मलय देश में औद्योगिक युग की सुविधाएँ हों और लोगों की मनोदशा भी आधुनिक बने। राजनीतिक दृष्टि से अँग्रेज पुष्ट थे ही। वे आर्थिक दृष्टि से भी पूर्णतया पुष्ट और सशक्त रहना चाहते थे। नये आर्थिक युग की सर्वथा नवीन एवं उलझी हुई समस्याएँ सामने थीं। इस लिए मलय देश के उन क्षेत्रों के अँग्रेज सलाहकारों ने जो कि आर्थिक दृष्टि से समुन्नत थे, नये आदेश देने शुरू किये। सुल्तानों को इन आदेशों का पालन करना पड़ा। अब मलयवासी स्वयं अपने ही घर में बन्दी थे। चीनवालों ने भी मलय-वासियों के साथ ऐसी ही नीति बरती। वे उद्योगपति तो थे ही, कर्ज में रुपये भी देते थे और सूदखोरी से धन अर्जित करते थे। फलतः मलयवासी उनके पंजे में थे।

इस तरह दोहरी गुलामी और अँग्रेजों की भेद-नीति के कारण मलयवासियों की हालत दिनोंदिन गिरती गयी और प्राकृतिक साधनों से सम्पन्न यह देश दरिद्र होता चला गया। दूसरे महायुद्ध के आरम्भ होने तक यही हालत बनी रही।

जापानी आक्रमण

१६३६ ई० में दूसरा महायुद्ध प्रारम्भ हुआ। ७ दिसम्बर १६४१ को मलय पर जापानी आक्रमण हुआ। ८ दिसम्बर को कोटाबारु और केडाह-थाईलैंड की सीमा पर आक्रमण हुआ। १५ फरवरी १६४२ को अँग्रेजों ने जापानियों से हार स्वीकार कर ली। मलय देश की यह पराजय इतनी आकस्मिक हुई कि सारा संसार चकित रह गया। पराजय का सबसे बड़ा कारण यह

था कि मलय के विदेशी शासकों ने कभी भी इस बात की जरूरत नहीं समझी कि मलयवासियों का सहयोग प्राप्त किया जाये, उनको भी सरकार के कामों में साझीदार बनाया जाये, उनकी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति सुधारी जाये, उनको आधुनिक सभ्य संसार का गर्वोन्नत नागरिक बनाया जाये। मलय की यह पराजय जापान की विजय नहीं, मलय देश में विदेशी सत्ता की दोषपूर्ण शोषण-शासन की नीति थी। सिंगापूर की पराजय के बाद वहाँ चीनी कम्युनिस्ट और कुमिन्तांग के कार्यकर्ता छिपे तौर से जापान-विरोधी काम करते रहे। अन्त में जब जापान ने हथियार डाल दिये तो ५ सितम्बर १६४५ को अँग्रेजी फौजें फिर सिंगापूर में पहुँच गयीं। इस प्रकार प्रायः साढ़े तीन वर्ष तक मलय देश जापानियों के अधिकार में रहा और इस अवधि में उसका व्यापार-वाणिज्य, उद्योग-धन्धा, साधारण राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन नष्ट हो गया।

युद्ध के तत्काल बाद मलय देश में आपसी कलह और लूट-मार में वृद्धि हुई। सर्वत्र अराजकता थी। मलेरिया तथा अन्य बीमारियों का प्रकोप बढ़ गया। मृत्यु संख्या भी बढ़ी। पीने के पानी की कमी हुई। अनाज की कमी के कारण भुखमरी की स्थिति पैदा हो गयी। युद्ध-काल में सड़कें और रेल की पटरियाँ नष्ट कर दी गयी थीं। पुल उड़ा दिये गये थे। इसलिए यातायात की कठिनाई भी बढ़ गयी थी। पुलिस की संख्या के साथ उसकी नैतिकता भी घट गयी थी। मानव-जीवन का मूल्य ही घट गया था। खाना, कपड़ा, मकान—सब की घोर कठिनाई थी। स्कूल, कालेज, अस्पताल सभी नष्ट हो गये थे।

नव-निर्माण

इसी भयानक और निराशाजनक वातावरण में नव-निर्माण का आरम्भ हुआ। अराजकता की रोक-थाम की गयी और लोगों का ध्यान रचनात्मक योजनाओं में लगाया गया। इसी समय अँग्रेजी सरकार और कम्युनिस्टों के बीच अनेक मुठभेड़ें हुईं। यह संघर्ष वर्षों तक चलता रहा। इसके बारे में अलग से विस्तार में चर्चा की गयी है।

शासन की ओर से सबसे पहिला काम जो किया गया वह था स्कूल-कालेजों का खोलना। युद्ध के पहिले कुल जितने बच्चे स्कूलों में पढ़ते थे १९४६ ई० में उनकी संख्या दूनी हो गयी। ६ वर्ष तक मलय, चीनी, तमिल और अँग्रेजी में शिक्षा निःशुल्क कर दी गयी। अँग्रेजी की पढ़ाई द्वितीय भाषा के रूप में अनिवार्य कर दी गयी। इंजीनियरिंग, कानून तथा एशियाई विद्याओं की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया।

उद्योग-धन्धों और व्यापार-वाणिज्य को फिर से संगठित किया गया। सड़कें बनायी गयीं। रेल की पटरियाँ फिर से बिछायी गयीं और बन्दरगाहों, जहाजों के अड्डों तथा गोदामों का पुनर्निर्माण किया गया। फलतः व्यय बहुत अधिक हुआ और टैक्स बढ़ाने पड़े। उधर कम्युनिस्टों को दबाने में भी बहुत खर्च पड़ रहा था। जनवरी १९४८ में सिंगापूर के हाई-कमिश्नर ने बयान दिया था कि कम्युनिस्ट-विद्रोह को दबाने में १,२५,००० डालर प्रतिदिन व्यय हो रहा है। इस भारी खर्च का एक हिस्सा ग्रेट ब्रिटेन ने भी अपने ऊपर ओढ़ लिया था। उसी समय मलय देश में ५,८०,००,००० डालर का ऋण भी उगाहा गया। और धीरे-धीरे नव-निर्माण का काम चलने लगा।

४. स्वराज्य, जातियाँ और कम्युनिस्ट-विद्रोह

अन्य दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों की भाँति मलय में भी युद्ध और युद्धोत्तर काल में स्वराज्य, राष्ट्रीयता और समाजवाद की माँग बढ़ी और पुष्ट हुई। उसकी बढ़ती शक्ति देखकर विदेशी शासकों को उससे समझौता करना पड़ा। युद्ध समाप्त होते ही सन् १९४५ में सर हेराल्ड मैकमिकायल मलय भेजे गये। उन्होंने मलय देश के सुल्तानों से समझौता किया, जिसके फलस्वरूप ब्रिटेन को इस बात का अधिकार मिल गया कि वह इन सुल्तानों से पूछे बगैर कोई भी कदम उठा सकता था। जनवरी १९४६ में वह समझौतों का कागज लेकर लन्दन चले गये। ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि मलय-संघ में पेनांग और मलक्का भी सम्मिलित कर लिये जायेंगे और इन सब को मिलाकर एक नवीन मलय-संघ की स्थापना की जायेगी। सिंगापूर अलग ब्रिटिश सम्राट् के अन्तर्गत रहेगा। सारी शक्ति मलय-संघ की केन्द्रीय सरकार को दे दी जायेगी और विभिन्न राज्यों के पास उतनी ही शक्ति रहेगी जितनी उन्हे केन्द्र की ओर से दी जायेगी। सुल्तानों की गद्दी और तनखाहें सलामत रहेंगी। वह मलय सलाहकार समिति में अध्यक्षता करेगा। यह भी निश्चय हुआ कि मलय देश की नागरिकता सब को प्रदान की जाये, जाति अथवा धर्म का भेदभाव न किया

जाये, सबको समान रूप से नौकरियों में प्रवेश करने दिया जाये। जो लोग सिंगापूर अथवा मलय देश में जन्मे हों अथवा जो लोग पिछले १५ वर्षों में से दस वर्ष से वहाँ रहे हों उन्हें नागरिकता देने का फैसला किया गया।

परन्तु शीघ्र ही इस नये विधान का विरोध आरम्भ हुआ। इस बार मलयवासियों का नेतृत्व सुल्तान नहीं, वे नवयुवक कर रहे थे जो अंग्रेजी पढ़े-लिखे थे। इनका प्रधान नेता दातोआन बिन जाफर था। वह जोहोर का प्रधान मंत्री था। मलय किसानों में भी जागृति आयी और एक संयुक्त मलय राष्ट्रीय संस्था का जन्म हुआ। इस संस्था की शाखा गाँव-गाँव तक में खुल गयी। चारों ओर से असहयोग की धमकियाँ सुनायी देने लगीं। सुल्तानों ने भी कहा कि उनको बहकाकर दस्तखत करा लिये गये। वे अपनी हस्ती को सर्वथा मिटा देना नहीं चाहते थे। फलतः ये समझौते रद्द कर दिये गये। १९४६ ई० के अप्रैल महीने में ब्रिटिश सरकार ने घोषित किया कि संयुक्त मलय राष्ट्रीय संस्था तथा ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि मिलकर दूसरी शर्तें बनायेंगे। बाद में सिफारिश करने के लिए चीनियों तथा भारतीयों की भी एक प्रतिनिधि कमेटी बनी। इन प्रस्तावों के आधार पर १९४७ ई० में अँग्रेजी सरकार ने एक नया विधान तैयार किया। मैकमिकायल के समझौते हमेशा के लिए दफना दिये गये। सुल्तानों को अपने पुराने अधिकार फिर प्राप्त हो गये। ब्रिटिश सम्राट् को मलय देश की सुरक्षा और परराष्ट्र-सम्बन्धी सम्पूर्ण अधिकार दे दिये गये। तय हुआ कि पहिले की भाँति सुल्तान अँग्रेजों की सलाह से काम करेंगे। संघ की केन्द्रीय सरकार में कार्यकारिणी होगी,

कौंसिलें होंगी और एक हाई-कमिश्नर भी होगा। हाई-कमिश्नर को इस बात की जिम्मेदारी दी गयी कि वह मलय-निवासियों के अधिकारों की रक्षा करे।

नये विधान के बारे में चर्चा करने से पहिले मलय की विभिन्न जातियों के बारे में कुछ कहना आवश्यक है। १९४७ ई० में मलय देश की जनसंख्या ५८,०८,००० थी। इसमें मलयवासियों की जनसंख्या २५,१२,००० अथवा ४३·३ प्रतिशत थी। चीनियों की जनसंख्या २६,०८,००० अथवा ४४·९ प्रतिशत थी। भारतीयों की संख्या ६,०५,००० अथवा १०·४ प्रतिशत थी। अँग्रेजों की संख्या १७,९४० अथवा १ प्रतिशत का तीन-दशमांश भाग थी। अँग्रेजों के आगमन से पहिले मलयवासियों की जनसंख्या सबसे अधिक थी। धीरे-धीरे चीनियों की संख्या बढ़ने लगी। उस समय उनकी जनसंख्या २३,९५,००० अथवा ४९·२ प्रतिशत थी। और चीनियों की संख्या १८,८०,००० अथवा ३८·६ प्रतिशत थी। सिंगापूर की जनसंख्या ९,३८,००० थी। इसमें चीनियों की जनसंख्या ७,२८,००० अथवा ७७·४ प्रतिशत थी। मलयवासियों की जनसंख्या केवल १२·१ प्रतिशत थी।

मलयवासी अपने को स्वदेशी और चीनियों तथा भारतीयों को विदेशी समझते थे। कुछ पढ़े-लिखे मलयवासी इस संकीर्णता से ऊपर उठे और उन लोगों ने यह कोशिश भी की कि मलय देश में एक सम्मिलित राष्ट्रीयता का जन्म हो सके। परन्तु अनेक कारणों से वे अपने उद्देश्य में पूर्णतया सफल न हो सके।

हमने ऊपर जो आँकड़े दिये हैं उन भारतीयों और चीनियों के सम्बन्ध में एक बात ध्यान देने की है। इनमें से अधिकतर

लोग मलय देश में प्रवासी थे और स्थायी रूप से मलय देश में नही रहते थे। वे बीच-बीच में स्वदेश लौट जाते थे। वे मलय देश में मात्र धन कमाने जाते थे, बसने के लिए नही। कुल चीनी आबादी में से लगभग एक तिहाई का जन्म वही मलय देश में हुआ था। परन्तु वे भी अपने माँ-बाप के देश को वापिस लौट जाते थे। उनमें थोड़े ही लोग मलय देश में घर-बार बनाकर स्थायी रूप से रहते थे। इसलिए मलयवासी सहसा चीनवासियों को मलयवासी मानने को तैयार न थे।

इसका फल यह हुआ कि मूल मलयवासियों और चीनी प्रवासियों में आपसी द्रोह बढने लगा। सरकार भी इस भावना को दबा न सकी। एक विचित्र बात यह हुई कि जहाँ तक भारतीय प्रवासियों का सम्बन्ध है, उनको मलयवालों के साथ ही चीनियों की भी घृणा प्राप्त थी। भारतीय तमिल मुख्यतः मजदूर थे। वे शक्ति-सम्पन्न न थे। चीनियों की तरह धनी भी न थे।

स्वयं मलयवासी मुसलमान हैं। वे अपने धार्मिक विश्वासों में कट्टर है। वे एक ईश्वर में विश्वास करते है। वे चीनियों से डरते है और नही चाहते कि उनके देश के शासन में चीनियों को अधिक अधिकार मिले। युद्ध के पहिले और नया विधान आने तक मलय देश में चीनी, भारतीय और

पाहग की पुरानी मस्जिद

मलयवासी नागरिकों के बीच ऐसा ही सम्बन्ध था।

नयी विधान सभा को अधिनियम और नियम बनाने का अधिकार था। इसमें १५ सरकारी और ६१ गैर-सरकारी सदस्य होते थे। आरम्भ में सभी सदस्यों को नामजद कर देने का निश्चय हुआ। यह कहा गया कि चुनाव यथाशीघ्र करा दिया जायेगा। सोचा गया था कि गैर-सरकारी सदस्यों में से ३१ मलयवासी होंगे, बाकी योरोपियन, चीनी और भारतीय होंगे। परन्तु चीनी लोग इस व्यवस्था से जरा भी सन्तुष्ट न थे। अपनी अधिक संख्या के बावजूद उनको प्रतिनिधित्व बहुत कम मिला था। मलयवासियों को यह डर था कि चीनी लोगों की जनसंख्या कभी भी बढ़ सकती है क्योंकि वे स्थायी रूप से मलय देश में नहीं रहते। मलयनिवासियों की माँग थी कि सिंगापूर-निवासियों तथा उन चीनियों और भारतीयों को जो कि स्थायी रूप से मलय देश में नहीं रहते, नागरिकता न प्रदान की जाये। मलयवासियों तथा उन चीनियों और भारतीयों को जिनकी दूसरी पीढ़ी मलय देश में रहती थी, नागरिकता के अधिकार स्वतः मिल गये। प्रवासी लोग, विशेषतः चीनी प्रवासी, पन्द्रह वर्ष मलय में लगातार रहने के उपरान्त नागरिक बन सकते थे।

प्रवासी नागरिक को नागरिकता की शपथ लेनी पड़ती थी, परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि वह अपनी मातृभूमि से सम्बन्ध विच्छेद कर ले और उसकी नागरिकता छोड़ दे। इस प्रकार चीनी तथा भारतीय प्रवासियों को अपने देशों की नागरिकता के अधिकारों के अतिरिक्त मलय-संघ की नागरिकता भी मिल गयी। तत्कालीन शासकों को आशा थी कि इस प्रकार

की व्यवस्था से तीनों जातियों में एकता स्थापित होगी और मिली-जुली मलय-देशभक्ति का उदय होगा। परन्तु इस व्यवस्था का विरोध चीनियों के धनी वर्ग ने किया। कुछ मलयवासी भी इसके विरोधी थे। धनी चीनियों के विरोध का कारण यह था कि मलय-संघ में सिंगापूर शामिल नहीं किया जा रहा था। सिंगापूर में चीनी ही बहुसंख्यक थे। वर्तमान व्यवस्था से चीनियों के प्रति पूरा न्याय नहीं हो पा रहा था। मलय का विरोध पुटेरा की ओर से हुआ। इस दल में अनेक छोटी-छोटी पार्टियाँ थीं। इसमें वाम-पक्षी, अँग्रेजी शिक्षा-प्राप्त मलय बुद्धिजीवी थे। ये लोग अँग्रेजी शासन के साथ ही सुल्तानों के शासन के भी विरोधी थे। इनकी माँग थी कि सिंगापूर को शामिल करके एक संयुक्त मलय-संघ का निर्माण किया जाये, तुरन्त पूर्ण लोक-तन्त्रवादी सरकार संगठित की जाये, जिसमें चुनी हुई विधान सभा हो और मलय के सभी स्थायी निवासियों को नागरिकता प्रदान की जाये। परन्तु इन विरोधों के बावजूद ब्रिटिश हुकूमत ने फरवरी १९४८ ई० में मलय-संघ की स्थापना कर दी।

इस नये मलय-संघ में सिंगापूर का स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रखा गया। उसकी अपनी अलग सरकार थी, उसकी अपनी विशेष समस्याएँ थीं। सिंगापूर आयात-कर का सख्त विरोधी है क्योंकि बाहर से आनेवाले मालों पर ही उसकी समृद्धि पूर्णतया निर्भर करती है। सिंगापूर में आने और वहाँ से जानेवाले जहाजों की संख्या जितनी अधिक होगी, उतनी ही अधिक आमदनी सिंगापूर की होगी। परन्तु मलय-संघ की आमदनी इस बात पर निर्भर करती है कि उसे आयात और निर्यात-कर

किस मात्रा में प्राप्त होते हैं। सिंगापूर में चीनियों की आबादी सबसे अधिक है, इसलिए मलय-संघ में उसके शामिल हो जाने से मलयवासियों की जनसंख्या अनुपाततः कम हो जाती है। सिंगापूर को ब्रिटिश सम्राट् के अन्तर्गत एक उपनिवेश का स्थान दिया गया। उसका एक गवर्नर बनाया गया, एक कार्यकारिणी और छोटी-सी विधान सभा भी संगठित की गयी। विधान सभा के ९ सरकारी और १३ गैर-सरकारी सदस्य हुए। गैर-सरकारी सदस्यों में से तीन का चुनाव योरोपियन, चीनी और भारतीय व्यापार-संघों को करना था। ६ का चुनाव साधारण मतदाताओं को करना था। ४ की नामजदगी गवर्नर को करनी थी। २१ वर्ष की उम्र के प्रत्येक बालिग को मत देने का अधिकार था। इस प्रकार सिंगापूर को युद्ध के बाद फिर से संगठित और उन्नत करने की कोशिश की गयी।

कम्युनिस्ट विद्रोह

अन्य दक्षिण-पूर्वी देशों की भाँति मलय में भी कम्युनिस्टों की समस्या ने परेशानी पैदा कर दी थी। युद्ध-काल में जिस समय चारो ओर भगदड़ मची हुई थी, कम्युनिस्टों ने डटकर जापानियों का मुकाबिला किया था और अँग्रेज शासकों ने उनका सहयोग स्वीकार किया था। धीरे-धीरे कम्युनिस्टों की शक्ति बढ़ती गयी और मजदूर-सभाओं पर उनका अधिकार हो गया। उस समय मलय देश में प्रेस और सभाओं की आजादी थी। कम्युनिस्टों ने इस आजादी से पूरा लाभ उठाया और अपने को शक्तिशाली बनाया। सारे मलय-संघ में कम्युनिस्टों के नेतृत्व में मजदूर सभाएँ संगठित हो गयीं। इन कम्युनिस्टों ने विदेशी शासकों का विरोध किया और स्वतन्त्र, शोषणहीन जन-

तंत्रवादी मलय देश की माँग की। १९४६ ई० में दो बड़ी आम हड़तालें हुईं। उस समय ब्रिटेन में मजदूर सरकार थी। कुछ दिनों तक इस सरकार ने नर्म नीति से काम लिया। परन्तु १९४८ ई० में उसने घोषित किया कि कम्युनिस्ट मलय देश में कम्युनिस्ट गणतंत्र कायम करना चाहते हैं। उसी वर्ष सारे देश में यकायक हड़तालों और छापामार युद्धों का ताँता लग गया। अनुमानतः इस युद्ध में लगभल ५००० कम्युनिस्ट शामिल थे। कम्युनिस्टों ने मलय की विदेशी सरकार को परेशान कर दिया। सरकार ने भी कठोरता से काम लिया। कम्युनिस्टों को दबाने के लिए उसने पूरी शक्ति लगा दी। १९५० ई० तक आते-आते कम्युनिस्ट विद्रोह पर अंकुश लगा दिया गया। परन्तु यह दावा गलत होगा कि कम्युनिस्टों को अन्तिम रूप से पूरी तरह दबा दिया गया। कम्युनिस्टों ने जापान-विरोधी युद्ध के समय छापामार युद्ध-प्रणाली में तो कुशलता प्राप्त कर ही ली थी; उन्होंने अपने स्वतंत्रता-परक आन्दोलनों के कारण मजदूर सभाओं के संगठन के सहारे लोगों का विश्वास भी प्राप्त कर लिया था, और लोगों के हृदय में अपने लिए स्थान भी बना लिया था।

स्वतंत्र मलय देश

कम्युनिस्टों के साथ ही राष्ट्रवादियों ने भी माँग की कि मलय देश स्वतंत्र किया जाये। आरम्भ में इस माँग का घोर विरोध किया गया, दमन-चक्र चला, बमबारी हुई, फौजी शासन और निर्मम अत्याचारों का बाजार गर्म रहा। कहने के लिए तो यह सब कम्युनिस्टों को दबाने, अराजकता और आतंकवाद पर अंकुश लगाने के लिए किया गया और इसी बहाने आज भी वहाँ बहुत बड़ी संख्या में विदेशी सैनिक मौजूद

हैं, परन्तु सत्य यह है कि यह सब इसलिए किया गया था कि मलय देश का स्वतंत्रता आन्दोलन दब जाये और वहाँ अँग्रेजी सत्ता बनी रहे। परन्तु मलय देश का असमझौतावादी राष्ट्रीय आन्दोलन जोर पकड़ता गया। अन्त में मलय देश में अँग्रेजों का शासक के रूप में बने रहना, असम्भव हो गया और ३१ अगस्त १९५७ ई० को मलय देश स्वतंत्र घोषित कर दिया गया और वह बाद में संयुक्त राष्ट्र-संघ का सदस्य भी हो गया। मलय देश को भारत की आज़ादी के ठीक दस वर्ष बाद आज़ादी मिली।

मलय देश तो स्वतंत्र हो गया और वहाँ लोक-तंत्रवादी राष्ट्रीय सरकार भी कायम हो गयी, परन्तु उसे सिंगापूर का बलिदान करना पड़ा। यह बात मलय तथा सिंगापूर के राष्ट्रवादियों को अत्यधिक खटक रही है। सिंगापूर ऐतिहासिक एवं भौगोलिक दृष्टि से मलय देश का अविभाज्य अंग रहा है। उसे मूल देश से अलग रखकर अँग्रेज शासकों ने तात्कालिक रूप से अपने स्वार्थों की रक्षा भले ही कर ली हो परन्तु निकट भविष्य में यही समस्या विकराल रूप धारण कर सकती है।

गत चुनावों के बाद स्वतंत्र मलय राष्ट्र के सर्वोच्च शासक के रूप में जोहोर के सुल्तान को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया गया। परन्तु अधिक वृद्ध होने के कारण (जोहोर के सुल्तान की उम्र इस समय ८३ वर्ष है) सुल्तान ने यह पद ग्रहण नहीं किया। तब नेग्री सेम्बीलन के सुल्तान तुआंकू अब्दुलरहमान को इस पद पर प्रतिष्ठित किया गया। मलय देश के सर्वोच्च शासक तुआंकू अब्दुलरहमान इस समय ६१ वर्ष के हैं। इन्होंने पिछले २५ वर्षों में अपने राज्य में

मलय राष्ट्र के सर्वोच्च शासक
तुआंकू अब्दुलरहमान

अनेक सामाजिक सुधार किये। इन्होंने शिक्षा का प्रसार किया और अपने राज्य की जनता को साक्षर एवं शिक्षित बनाया। इन्होने अपने राज्य में अँग्रेजी शिक्षा का भी प्रचार किया। तुआकू अब्दुलरहमान स्वयं भी पढ़े-लिखे, प्रगतिशील और आधु· निकता के प्रेमी शासक हैं।

मलय राष्ट्र-संघ के मुख्य मंत्री तेगंकू अब्दुलरहमान अब स्वतंत्र मलय राष्ट्र के प्रधान मंत्री हैं। 'तुआकू' का अर्थ शासक अथवा राजा होता है। 'तेगंकू' का अर्थ राजकुमार होता है। यद्यपि मलय देश के सर्वोच्च शासक और प्रधान मंत्री दोनो का नाम अब्दुलरहमान है, परन्तु 'तुआकू' और 'तेगंकू' शब्दों की सहायता से इनका अन्तर समझा जा सकता है। ये दोनो व्यक्ति कानून की शिक्षा प्राप्त करने साथ-साथ लन्दन गये थे। दोनो को अँग्रेजी भाषा पर पूरा अधिकार है और दोनो पाश्चात्य शासन-व्यवस्था तथा लोकतन्त्रात्मक शासन-प्रणाली की गति-विधि से पूर्णतया परिचित हैं। तेगंकू अब्दुलरहमान मलय देश के सुप्रसिद्ध राजनीतिक नेता हैं और उनके प्रयासों के फलस्वरूप मलय राष्ट्रवादियों का मोर्चा बना तथा मलय देश को वैधानिक स्वाधीनता प्राप्त हुई। मलय देश राष्ट्र-संघ का सदस्य भी इन्हीं की प्रेरणा से बना हुआ है। स्वतंत्र मलय राष्ट्र के

सर्वोच्च शासक अथवा राष्ट्रपति का कार्यक ल पाँच वर्ष का है। इनको ६०,००० पौंड प्रतिवर्ष वेतन मिलता है। इस समय सामन्तवादी प्रथा और विदेशी शासन-सत्ता से मुक्त होकर मलय
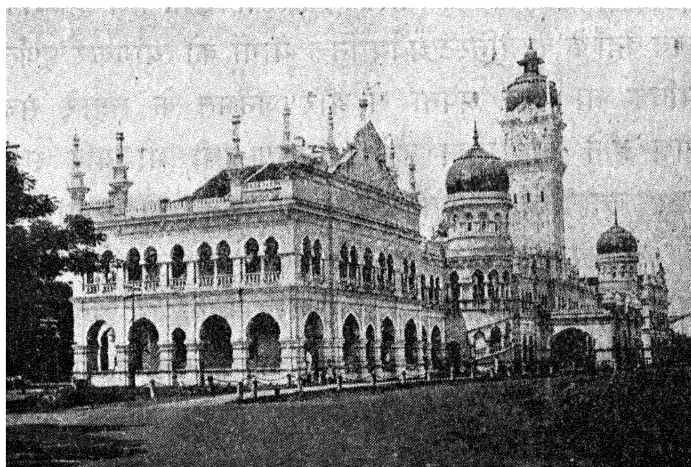
क्वालालम्पूर का राजभवन

देश लोकतंत्र की ओर तीव्र गति से बढ़ रहा है। तेगंकू अब्दुल-रहमान और उनकी सरकार निर्माणकारी कार्यों में लगी हुई है।

परन्तु मलय देश की सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वहाँ विभिन्न राजनीतिक दलों में विरोध अत्यधिक है। नये लोकतंत्रात्मक शासन से वामपक्षियों को और विशेषतः कम्युनिस्टों को सन्तोष नहीं हुआ। याद रखने की बात है कि जो ४६ प्रतिशत चीनी मलय देश में रहते हैं, वे अधिकतर मज़दूर हैं। अँग्रेजों के शासन-काल में उनका शोषण बुरी तरह हुआ। जापानी आक्रमणकारियों ने भी उन्हें बहुत बुरी तरह पीसा। इसलिए इनका झुकाव कम्युनिज्म की ओर स्वाभाविक है। चीन के अभ्युदय ने भी उन्हें प्रभावित किया। वर्तमान

सरकार यदि उनकी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने में सफल न हुई तो अगले चुनावों में शायद संयुक्त लोकतंत्रात्मक मोर्चे को विजय प्राप्त करना कठिन हो जायेगा।

मलय देश की राजनीतिक समस्या तभी हल हो सकती है जब वहाँ के कम्युनिस्ट अवैधानिक मार्गों को त्यागकर पूर्णतया वैधानिक मार्ग को अपना लें और जनमत के सहारे सत्ता-सम्पन्न होने का प्रयत्न करें। दक्षिण-पंथी भी यदि स्थायी सरकार बनाना चाहते हैं तो उन्हें सच्चे लोकतंत्र की, कल्याणकारी राज्य की स्थापना करनी पड़ेगी। यदि लोकतंत्र के नाम पर सामान्तवादी, पूंजीवादी और विदेशी शक्तियाँ अपना काम पूरा करती रहेंगी तो मलय देश में न तो स्थायी शान्ति की स्थापना हो सकेगी, न स्थायी सरकार ही बन सकेगी।

मलय देश की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक है। इतने समृद्ध और उन्नतिशील देश में इतना नीचा जीवन-स्तर, इतनी अशिक्षा, इतनी रूढ़िवादिता और सामन्तवादी जीवन मूल्यों का इतना गहरा प्रभाव असंगत है। प्रगतिशील, उन्नतिशील मलय राष्ट्र अपने जीवन से इन असंगतियों एवं अभिशापों को ही दूर करने में लगा हुआ है।

मलय देश की स्वाधीनता, उसके लम्बे ऐतिहासिक जीवन की एक बहुत महत्वपूर्ण घटना है। यह स्वाधीनता मलय देश-वासियों के जीवन की अगति और दुर्गति को दूर करेगी, उसके विकास, उन्नति और सांस्कृतिक उत्कर्ष के द्वारों को खोलेगी, उसके अभियान के मार्ग को प्रशस्त करेगी। और यह शूरमा देश स्वयं सुखी और समृद्ध रहकर दूसरे देशों को भी सुखी और समृद्ध बना सकता है।

५. सिंगापूर, मलक्का और पेनांग

सिंगापूर, मलक्का और पेनांग व्यापार-वाणिज्य के प्राचीन अड्डे हैं। पहिले यहाँ प्रवासी भारतीयों का आधिपत्य था।

एक मलय कथा के अनुसार कोई राजा बछितराम शाह (बाद में उसका नाम सांग सेपेरबा पड़ गया) अपने दो साथियों को लेकर एक दिन यकायक बुकित सिगुन्तांग महामेरु (जो कि पलेम्बांग में था) पहुँचा। उस राजा ने अपने को सिकन्दर महान् का उत्तराधिकारी बताया और स्थानीय शासक का दामाद बन बैठा। पलेम्बांग का वह शासक बन गया। बाद में उसने जावा (यवद्वीप) और बेन्तन पर भी अधिकार कर लिया। बेन्तन में उसे संगनील उत्तम नाम का एक पुत्र पैदा हुआ। उसे वहीं छोड़कर वह सुमात्रा वापिस चला गया। सुमात्रा को उस समय मेनांग काबू कहते थे। संग (अथवा सिंह) नील उत्तम ने बेन्तन की राजकुमारी से विवाह किया और सिंहपुर प्रायद्वीप को अपना घर बनाया। यह घटना ११६० ई० की है। कुछ इतिहासज्ञों का कथन है कि सिंहनील उत्तम ने इसी प्रायद्वीप की राजकुमारी से विवाह किया और यहीं बस गया। उसी के नाम पर यह सिंहपुर (सिंह और पुर दोनो संस्कृत शब्द हैं) या बाद में सिंगापूर कहलाया।

सिंगापूर का एक दूसरा नाम 'तमाशक' या 'तमाशा' भी

बताया जाता है। कहते हैं कि यह नाम भी बहुत प्राचीन है। यदि इसका अर्थ है वह स्थान जहाँ खुशी मनायी जाती थी, आनन्दोत्सव होते थे तो यह शब्द मलय भाषा का नहीं है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि वह नाम भारतीयों द्वारा दिया गया था। दक्षिण भारत अथवा भारत के दूसरे प्रान्त से जो लोग जावा और सुमात्रा गये थे, उन्होंने ही इस टापू का नाम सिंहपुर रखा था जो बाद में सिंगापूर हो गया। यह बात निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि इसका नाम सिहनील उत्तम ने ही रखा था। उसी शासक ने इसे बसाया और उन्नत किया था। यह नगर नदी और पहाड़ के बीच में बसा था। सिहनील उत्तम का निवास-स्थान पहाड़ पर था। यहाँ उसने १२०८ ई० तक राज्य किया था। इसी शासक के समय में इस बन्दरगाह ने अत्यधिक उन्नति की। पश्चिम और पूर्व के सभी व्यापारी यहाँ आते थे। उनके जलपोत यहीं विश्राम करते थे।

१२५२ ई० में सिंघपुर के शासक ने जिसका नाम इस्कन्दर अथवा सिकन्दर था, एक बार अपनी रानी को अपमानित किया। रानी के पिता ने क्रुद्ध होकर मजापहितवालों को निमंत्रित किया कि वे सिंघपुर पर आक्रमण करें। वह वहाँ का उच्च अधिकारी था। उसने वचन दिया था कि जिस समय मजापहित के लोग आयेंगे, वह सिंघपुर का मुख्य द्वार खोल देगा। मजापहित बहुत बड़ी जल तथा थल-सेना लेकर आये और उन्होंने नगरवासियों को तलवार के घाट उतार दिया। कुछ नगर से भाग निकले। वे मलय देश में यहाँ-वहाँ भ्रमण करते रहे। बाद में वे मलक्का में आकर बस गये। यहाँ उन्होंने एक नया नगर बसाया। अलबुकर्क और पुर्तगालियों ने सन्

१५११ ई० में उनको यहाँ से भगा दिया।

उधर रानी के पिता सिंहरंजनतप का वर बर्बाद हो गया, खम्भे गिर गये। वहाँ चावल न मिलने से अकाल पड़ गया, सिंहरंजनतप और उनकी स्त्री अपने देशद्रोह के कारण शिलाखण्ड में परिणत हो गये। वे शिलाखण्ड अब तक सिंगापूर नदी में देखे जा सकते हैं। पिछली शताब्दी के आरम्भ में सिंगापूर नदी के पास एक विचित्र शिलालेख मिला, परन्तु उसे कोई पढ़ न सका; किसी ने उसे तोड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। उसका एक टुकड़ा अब भी कलकत्ता संग्रहालय में रखा हुआ है।

मलक्का

मलक्का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र और समृद्ध बन्दरगाह था। उसकी शोहरत सुनकर ही अलबुकर्क वहाँ गया था। मलक्का पर अलबुकर्क ने हमला किया और उसे अपने अधिकार में किया। पुर्तगाली लोग मलक्का में प्राय: १३० वर्ष तक रहे। वहाँ उन लोगों ने अपना प्रसिद्ध गिरजाघर भी बनवाया। यह गिरजाघर ऊँची पहाड़ी पर बना था, जहाँ से नगर एवं सागर का अत्यन्त मनोरम दृश्य दिखायी देता है। पुर्तगालियों के शासन-काल में मलक्का ने बड़ी उन्नति की और उसकी समृद्धि भी खूब बढ़ी। परन्तु यह कहना कठिन है कि कभी उसने उतनी उन्नति की जितनी बाहरवीं शताब्दी में मलय शासकों के अन्तर्गत सिंगापूर ने की थी।

सन् १६४१ ई० में डचों ने मलक्का से पुर्तगालियों को मार भगाया। उन्होंने मलक्का की किलेबन्दी की और उस पर अपना पूरा अधिकार जमा लिया। यहीं से उन्होंने पेरक, सेलंगार आदि मलय देश के विभिन्न राज्यों से सम्पर्क स्थापित

किया, व्यापार किया । सन् १७७६ ई० से १७६५ ई० के बीच यहाँ का व्यापार खूब चमका । १७६५ ई० में अंग्रेजों ने

मलक्का नदी का एक दृश्य

इस पर अधिकार कर लिया । बाद में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सिंगापुर में व्यापार का केन्द्र बनाया । फलतः मलक्का का महत्व बहुत कुछ कम हो गया । न यह बड़ा बाजार रह गया न बड़ा बन्दरगाह । विएना की सन्धि के अनुसार १८१८ ई० में मलक्का फिर डचों को वापिस दे दिया गया । अन्त में १८२४ ई० में अन्तिम रूप से मलक्का अंग्रेजों के हाथ में चला गया ।

१८६१ ई० में ब्रूसेल्स की रायल लाइब्रेरी में गोदिन्हो द इरेडिया लिखित एक पुस्तक की पाण्डुलिपि प्राप्त हुई । गोआ में सन् १६१३ में यह पुस्तक लिखी गयी थी और इसे स्पेन के सम्राट् फिलिप तृतीय को समर्पित किया गया था । १६ जुलाई १५६३ ई० को इस पुस्तक का लेखक मलक्का में ही पैदा

हुआ था। इसकी माँ मलय-निवासिनी थी और मकासार के सूप के राजा की बेटी थी। तेरह वर्ष की उम्र में यह लड़का गोआ के जेसुइट कालेज में पढ़ने के लिए भेजा गया। मगर धार्मिक शिक्षा में उसका मन नहीं लगा। वह भूगोल के अध्ययन और खतरनाक यात्राओं में रुचि लेता था। उसने मलय देश और पूर्वी द्वीप-समूहों का खूब भ्रमण किया और बाद में उपर्युक्त ग्रंथ लिखा।

गोदिन्हो का कथन है कि इस बन्दरगाह का नाम मलक्का सन् १४११ ई० में पड़ा। गोदिन्हो ने मलक्का का एक पूरा मानचित्र दिया है। जिस प्रकार अलबुकर्क ने १५११ ई० में इस नगर का निर्माण कराया, उसका पूरा विवरण इस ग्रन्थ में प्राप्त है। नगर की दीवार जो कि पत्थर और लकड़ी की बनी हुई थी लगभग ३२७५ फुट थी। इसमें किला था, राज-महल था, बिशप का घर था तथा अन्य इमारतें थीं। दीवार के भीतर पाँच गिरजाघर थे। किले में चार फाटक थे। नगर में तीन सौ पुर्तगाली परिवार रहते थे। दीवार के बाहर ७,४०० ईसाई थे, १४ गिरजाघर थे, दो अस्पताल और कई उपदेशगृह थे।

अपने समय के मलक्का का वर्णन उसने इस प्रकार किया है—संसार में यह भूमिखण्ड सबसे अधिक दूर और सबसे अधिक मनोहारी है। आबहवा स्वस्थ और प्राणपूर्ण है। मानव-जीवन और स्वास्थ्य के लिए यह आबहवा बहुत अनुकूल है। न गर्मी ज्यादा पड़ती है और न बहुत अधिक तरी ही रहती है।

गोदिन्हो ने बताया है कि मलय देश में मिट्टी के तेल के सोते भी थे। यदि मलक्का के आसपास पता लगाया जाये तो

शायद मिट्टी के तेल के सोते अब भी मिल सकते हैं।

सन् १७२६ ई० में फ्रोंकोई वेलण्टीन का एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इसमें कहा गया है : "यह भूमिखण्ड 'तेरा' अथवा 'रेजियो और रीफेरा' (सुवर्ण-भूमि) कहा जाता था। यह भारत का सबसे दक्षिणी भाग है। इसके और सुमात्रा के बीच में मलक्का है, जिसे कभी इसी नाम से पुकारा जाता है, कभी सिंगापूर के नाम से। समुद्र के किनारे से कई मील भीतर जाने पर भी मलक्का का महत्वपूर्ण नगर मिलता है। मलक्का पर अँग्रेजों का अधिकार १७६५ ई० में हुआ था। १८१८ ई० में यह डचों को दे दिया गया था। इस बीच १८०७ ई० में मलक्का का वह किला जिसे अलबुकर्क ने बनवाया था और जिसे डचों ने मज़बूत किया था, अँग्रेजों द्वारा नष्ट कर दिया गया। अन्त में फिर इस पर अँग्रेजों का अधिकार हो गया।

पेनांग

एक कथा प्रसिद्ध है कि एक जहाजी श्री फ्रांसिस लाइट का प्रेम केडाह के सुल्तान की बेटी से हो गया। सुल्तान ने लाइट को दहेज़ में पेनांग दे दिया। परन्तु बाद में छान-बीन करने पर पता चला कि लाइट ने १७७१ ई० में वारेन हेस्टिंग्ज को सलाह दी थी कि कम्पनी पेनांग और सालंग द्वीपों को अपने अधिकार में कर ले। परन्तु उस समय लाइट की बात नहीं मानी गयी। ये दोनो द्वीप केडाह राज्य में थे। राइट का सम्बन्ध इस राज्य से अधिक था। केडाह मलक्का से तीन सौ मील उत्तर था। सन् १७८६ ई० में राइट ने फिर बातचीत चलायी और सुल्तान ने भी अच्छा रुख दिखाया। सुल्तान से गवर्नर-जनरल के नाम एक पत्र राइट ने ले लिया

और कलकत्ते पहुँचा। इस बार लाइट की राय मान ली गयी और कम्पनी पेनांग को लेने के लिए तैयार हो गयी। ११ अगस्त १७८६ ई० को लाइट ने सभी अफसरों और स्वजनों के सामने पेनांग में अँग्रेजी झण्डा गाड़ दिया।

पेनांग जिस समय अँग्रेजों के कब्जे में आया उसके ठीक छह महीने बाद यह नियम बना दिया गया कि चाहे किसी देश के व्यापारी क्यों न हों, वे अपना जहाज़ पेनांग में ला सकते हैं और व्यापार कर सकते हैं। बाद में सिंगापूर में भी इसी नीति का पालन किया गया। इसी का फल था कि शीघ्र ही पेनांग बहुत बड़ा बन्दरगाह बन गया।

इस तरह मलक्का और सिंगापूर के बीच पेनांग का उदय और विकास हुआ।

मलक्का, पेनांग और सिंगापूर पहले कम्पनी बहादुर और बाद में ब्रिटिश साम्राज्य की चौकियों के रूप में प्रतिष्ठित हो गये। ये व्यापार के केन्द्र तो थे ही, उनको आधार बनाकर अँग्रेजों ने मलय देश पर भी अपना राजनीतिक आधिपत्य स्थापित किया। इनके कारण अंग्रेजी साम्राज्य के धन और राजनीतिक प्रभाव दोनों में अतिशय वृद्धि हुई। इन्हीं अड्डों के सहारे वे चीन और जापान की ओर भी बढ़े और इन देशों से गहरा सम्पर्क स्थापित करने में सफल हुए। ज्यों-ज्यों इनका महत्व बढ़ा त्यों-त्यों शासकों के मन में इनके प्रति ममता भी बढ़ती गयी। इनको सीधे ब्रिटिश सम्राट् के मातहत कर दिया गया। और मलय देश के स्वतंत्र होने के बाद भी इन पर से अंग्रेजों का शासन नहीं हट सका।

६. अर्थ-व्यवस्था

अधिकतर मलयवासी खेतिहर हैं। उनके खेतों में चावल पैदा होता है। उनमें से कुछ के पास रबड़ और नारियल के पेड़ भी हैं। पिछले युद्ध के पहिले मलय देश में रबड़ का जितना उत्पादन होता था, उसका उन्तालीस प्रतिशत इन किसानों के पेड़ों से आता था। जब से सरकार ने खेती की ओर ध्यान दिया और सिंचाई की व्यवस्था अच्छी हुई, धान की उपज बढ़ गयी।

मलय देश में मज़दूरी का काम प्रधानतया चीनी और भारतीय लोग करते हैं। मलयवासी मज़दूरी में उतनी रुचि नहीं लेते। टीन की खानों में काम करनेवाले बहुसंख्यक चीनी मज़दूर होते हैं। रबड़ उद्योग में काम करनेवाले अधिक-तर भारतीय मजदूर होते हैं। आरम्भ में इन मज़दूरों के लिए कोई नियम नहीं थे। इनकी मज़दूर सभाएँ भी नहीं थीं। रबड़ और टीन के अलावा ये भारतीय और चीनी मज़दूर रेलवे में तथा अन्य विभागों में भी काम करते थे। धीरे-धीरे मलय देश में मज़दूर आन्दोलन विकसित हुआ। साथ ही सरकार की ओर से भी नियम बने और उनका पालन कराने के लिए इन्सपेक्टर भी रखे गये। मलय सरकार और भारत सरकार ने इस कार्य में सहयोग किया। जो मजदूर भारत से मलय देश जाते थे उनकी

भर्ती के तरीकों में सुधार किया गया, तथा जहाज़ों में भी उनकी देख-भाल की व्यवस्था की गयी। मलय सरकार ने उनके काम के घण्टे और मज़दूरी निश्चित की। मालिकों को विवश किया
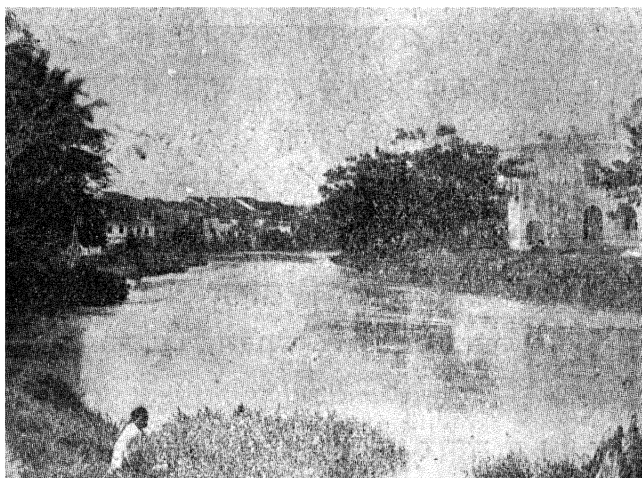
क्वालालम्पूर में क्लांग तथा बातू नदियों का संगम

गया कि वे मजदूरों के लिए घर बनवायें। स्वच्छ पानी, सफाई, दवा आदि की भी पूरी व्यवस्था की गयी। यह भी नियम बनाया गया कि मालिकों की ओर से मुफ्त दवा और अस्पताल की व्यवस्था हो जिससे मजदूरों और उनके परिवारवालों की दवा-दारू हो सके, स्त्री-मजदूरों को गर्भावस्था में विशेष सुविधा मिले, छोटे शिशुओं के लिए पालनाघर बनें, बड़े बच्चों के लिए स्कूल खुलें।

व्यापार और पूँजी

यद्यपि व्यापार से बढ़ते-बढ़ते अंग्रेजों ने मलय देश की शासन-व्यवस्था भी अपने हाथों में ले ली थी, परन्तु व्यापार के क्षेत्र में

भी वे किसी से पीछे न रहे। युद्ध के पहिले मलय देश में कुल विदेशी पूँजी अनुमानतः ४५,४५,००,००० डालर थी। इसमें ३७,२०,००,००० डालर की पूँजी केवल उद्योग-धन्धों में लगी हुई थी। इसमें अंग्रेजों की पूँजी २६,००,००,००० डालर थी। बाक़ी ८,२५,००,००० डालर पूँजी सरकारी कर्जे से प्राप्त की गयी थी। कभी यह ऋण ब्रिटेन में लिया जाता था, कभी मलय देश में। मलय देश में अमरीकी पूँजी २,४०,००,००० डालर थी। फ्रेंच, डच और जापानी पूँजी भी यहाँ लगी हुई थी। इनके अतिरिक्त मलय देश में चीन की भी २०,००,००,००० डालर पूँजी लगी हुई थी। यह पूँजी टीन की खानों, रबड़ और नारियल के बागों, बैंकों, जहाजरानी और व्यावसायिक कम्पनियों में लगी हुई थी।

मलय देश में संसार का ४१ प्रतिशत रबड़ उत्पन्न होता था। इसी प्रकार संसार का २९ प्रतिशत टीन मलय देश में होता था। यह आँकड़ा १९३८ ई० का है। उस समय ३३,०२,००० एकड़ भूमि पर रबड़ का उत्पादन होता था। कुल रबड़ का ४६ प्रतिशत योरोपियनों के हाथ में था। योरोपियनों में अँग्रेज ही मुख्य थे। १५ प्रतिशत चीनियों और एशियावासी लोगों के हाथ में था। ३९ प्रतिशत छोटे मलयवासी किसानों के हाथ में था। १९३८ ई० में ३,६१,००० टन रबड़ पैदा हुआ। परन्तु कुल निर्यात ५,२७,००० टन का हुआ, जिसका मूल्य १५,३०,००,००० डालर था। निर्यात में सुमात्रा, बोर्नियो और थाईलैंड का माल भी शामिल था।

इसी प्रकार १९३८ ई० में ४३,२०० टन टीन का उत्पादन हुआ। इसमें दो-तिहाई अँग्रेजों का था और एक तिहाई चीनियों का।

अन्य वस्तुओं का उत्पादन साधारण था। चावल का उत्पादन जितना होता था उतने में केवल ३६ प्रतिशत आदमी खा सकते थे। इसलिए चावल का आयात करना पड़ता था। लोगों की सम्पन्नता संसार के बाजार में रबड़ और टीन के भाव पर निर्भर

पेरक के हाथी

थी। कुछ लोगों की रोजी सिंगापूर में जहाजों के आने और वहाँ से जाने के ऊपर निर्भर थी। यह व्यापार मूलतः विनिमय का व्यापार था।

१९३२ ई० में जब मन्दी आयी उस समय ब्रिटिश साम्राज्य से आनेवाले माल के सम्बन्ध में विशेष सुविधा का प्रबन्ध किया गया। १९३८ ई० में मलय देश में जो कुछ आयात हुआ उसमें अकेले ब्रिटेन का १८·६ प्रतिशत तथा ब्रिटिश साम्राज्य का (जिसमें भारत भी था) १८ प्रतिशत, अमेरिका का ३ प्रतिशत, डच ईस्ट इण्डीज का २७ प्रतिशत और थाईलैंड का १६ प्रतिशत था।

१६३८ ई० में मलय देश के विशेष बाजार अमेरिका और ब्रिटेन थे, जिन्होंने क्रमशः ३० प्रतिशत और १४ प्रतिशत माल लिया था। अमेरिका में रबड़ और टीन की खपत सबसे अधिक थी। १६३८ ई० में अमेरिका ने मलय देश के कुल टीन का ५५ प्रतिशत और कुल रबड़ का ४१ प्रतिशत खरीदा या। योरोप और ब्रिटिश साम्राज्य ने मलय देश के कुल निर्यात का १७ प्रतिशत खरीदा था। इस प्रकार युद्ध के पहिले मलय देश का व्यापार-वाणिज्य अच्छा था और सिंगापूर का महत्व भी बहुत अधिक था।

१६४६ ई० में मलय देश में कुल ८,४३२ टन टीन तैयार हुआ। परन्तु १६४७ ई० में यह बढ़कर ३६,०७६ टन हो गया। बाद में टीन के उत्पादन की मात्रा बढ़ती गयी। जापानियों ने इस उद्योग को सर्वाधिक क्षति पहुँचायी थी। रबड़ के बागों को उतनी क्षति पहुँचाने में वे कामयाब नहीं हुए थे। रबड़ में कुल मिलाकर लगभग २०,००,००,००० डालर का नुकसान हुआ था। बहुत से कुली और मजदूर भी तितर-बितर हो गये थे। परन्तु धीरे-धीरे इस उद्योग में भी फिर उन्नति होने लगी और निर्यात बढ़ने लगा।

१६४७ ई० में मलय का कुल निर्यात ६२,००,००,००० डालर का था। इस वर्ष आयात ६४,३०,००,००० डालर का था। सिंगापूर की जो आमदंनी इस प्रकार के आयात-निर्यात से होती थी, अब फिर उसी मात्रा में होने लगी है। अमेरिका अब भी प्रमुख खरीददार है। ब्रिटेन से यथावत पक्के माल आ रहे हैं। आस्ट्रेलिया, ईस्ट इण्डीज़ तथा स्याम आदि से जिस प्रकार पहिले आयात-निर्यात का सम्बन्ध था, वह फिर से कायम हो गया है।

७. जन-जीवन

मलय देश उष्ण कटिबन्ध में पड़ता है। वहाँ के लोग पक्के रंग के, ठिगने, मांसल और मजबूत होते हैं। उनमें काम करने और बर्दाश्त करने की शक्ति बहुत अधिक होती है। उनका नख-शिख, शरीर की बनावट, नाक-नक्शा, सब-कुछ सुहावना, मनोहारी होता है। उनके चेहरे पर सदैव मुस्कराहट खेलती रहती है। उनके बाल काले और घने होते हैं। नाक चौड़ी होती है। मुँह कुछ फैला होता है। आँखें तेज और पुतलियाँ काली होती हैं। गाल की हड्डियाँ कुछ उभरी हुई होती हैं। ठुड्डियाँ चौकोर होती हैं और दाँत चमकते रहते हैं। उनके शरीर की बनावट सुघर होती है। वे डटकर, जमीन पर पाँव जमाकर खड़े होते हैं जिससे एक प्रकार की दृढ़ता टपकती है। वे हथियार इस्तेमाल करने, नाव चलाने, मछली मारने, शिकार करने, तैरने और डुबकी मारने में दक्ष होते हैं। वे हिम्मती होते हैं। अपने को हकीर अथवा छोटा नहीं समझते। लेकिन मेहमानों के सामने वे सदैव विनम्र होते हैं।

वे ढीली जाकेट और ढीला पैजामा पहिनते हैं। कमर से घुटने तक सारंग नाम का एक कपड़ा डाले रहते हैं। इस कपड़े को वे कई काम में लाते हैं। नहाने, सोने, सामान ढोने आदि में इससे सहायता मिलती है। सिर पर ये एक रंगीन रूमाल बाँधते

हैं। ये रूमाल बड़े खूबसूरत लगते हैं। ये कपड़े सूत, रेशम या दोनो की मिलावट के बनते हैं। कभी-कभी चाँदी-सोने के तारों से बने कपड़े भी ये लोग पहिनते हैं।

छाता लिये राजा पुतेह ज़ैनब

नंगे पाँव रहने का इनका अभ्यास है। अब धीरे-धीरे ये जूतों का भी प्रयोग करने लगे हैं। इनके पास पहिले काफी हथियार रहा करते थे। साधारणतया एक व्यक्ति के पास दो

कटारें, दो भाले, एक बन्दूक और एक लम्बी तलवार रहती थी। बच्चों के पास केवल दो-तीन हथियार होते थे। अब स्थिति बदलती जा रही है। मर्द बन्दूक की जगह छाता और बच्चे कटार की जगह स्लेट-पेन्सिल, कापी-किताब लेकर चलने लगे हैं।

छाते को शाही चिन्ह समझा जाता है। यह रेशम का भी होता है, सूती कपड़े का भी। सम्भवतः मलय देश में छाते का प्रवेश चीन से हुआ। उसका पीला रंग भी शायद वहीं से आया।

मलय देश के बच्चे

छोटा बच्चा कपड़े नहीं पहिनता। उसकी देख-रेख की चिन्ता भी कोई नहीं करता। अमीर घरों के बच्चों की बात दूसरी है। बच्चे बहुत अधिक रोते नहीं, इसलिए उनको मारने-पीटने की भी कम जरूरत होती है। किसी कमरे में चादर का पालना लटका दिया जाता है। इसी में वे सोते हैं। आठ-नौ वर्ष के होने पर बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है। इसी तमय वह कुरान पढ़ता है। कुरान की भाषा अरबी है। वह अरबी नहीं जानता, इसलिए वह कुरान को समझता नहीं। परन्तु उसके लिए कुरान का पढ़ना और याद करना आवश्यक है। विशेषतया ऊँचे परिवारों में शाम की नमाज के बाद कुरान पढ़ने की प्रथा है। उस समय जो बच्चा कुरान अच्छी तरह पढ़ लेता है, उसको बड़ी इज्जत मिलती है।

गरीब घर के बच्चों को अपने बाप की सहायता धान बोने में, मछली मारने में, भेड़-बकरी चराने में, जंगल से सामान लाने में करनी पड़ती थी।

मलय देश में बच्चों की ओर जितना अधिक ध्यान दिया जाता है उतना लड़कियों की ओर नहीं। छुटपन में ही उन्हें

चादर या सारंग में लपेट दिया जाता है। जिस समय बच्चे अलिफ, बे सीखते हैं, वे घर के काम-काजमें लगी रहती हैं। शाम-सुबह वह माँ के साथ जाकर नदी से पानी लाती हैं। वह खाना पकाने में माँ की मदद करती हैं। वे ही घर की सफाई भी करती हैं।

मलय देश की स्त्रियाँ

मलयवासी मुसलमान हैं। मलय देश की स्त्रियों पर उतना प्रतिबन्ध नहीं है जितना आमतौर से मुस्लिम औरतों पर होता है। विवाहिता स्त्रियों को काफी आजादी रहती है। जो व्यक्ति अपनी स्त्री पर आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्ध रखता है, वह समाज में अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता। मलयवासी मुसलमान धर्मान्ध नहीं होता। वह लोकाचार और रूढ़ियों में अत्यधिक कट्टर भी नहीं होता। वह स्वयं चार विवाह तक कर सकता है और करता भी है; परन्तु वह अपनी स्त्रियों को इस बात की छूट नहीं दे सकता कि वे किसी गैर-मलय, विशेषतया चीनी मर्द से ताल्लुक करें, चाहे वह कितना ही योग्य क्यों न हो। महर और तलाक दोनो की प्रथा है। जिस प्रकार पुरुष अपनी विवाहिता स्त्रियों को तलाक देकर छोड़ सकते हैं, उसी तरह स्त्रियाँ भी कर सकती और करती हैं।

मलय देश में पर्दा-प्रथा वैसी नहीं है जैसी हमारे देश में। घर के बाहर वे बिना पर्दे के निकलती हैं और अपना काम-काज करती हैं। जब किसी अवसर पर दावत होती है तो खाना परोसती हैं, सेवा करती हैं। परन्तु वे पुरुषों के बीच बैठकर खाना नहीं खा सकतीं। औरतें घर के भीतर अलग खाना खाती हैं। उस समय उनके बीच पुरुषों का प्रवेश निषिद्ध होता है।

हाँ, जिस समय केवल परिवार के लोग हों, अथवा मनोरंजन के लिए वे नदी के किनारे, जंगल में, बाग में, झरनों के पास बैठे हों, उस समय यह प्रतिबन्ध नहीं रहता। उस समय सभी लोग स्त्री-पुरुष साथ मिल-जुलकर खाते-पकाते हैं।

मलयवासियों में पारिवारिक रहस्य को जानने की कोशिश अशिष्टता समझी जाती है। स्त्रियों अथवा लड़कियों के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पूछना, हाल जानने की कोशिश करना खतरनाक है। मलयवासी इसे अच्छी बात नहीं समझते, ऐसे व्यक्तियों को वे घृणा और सन्देह की निगाह से देखते हैं। मलय राज्य-संघ में चीनियों और मलयवासियों के बीच संघर्ष का कारण अक्सर मलय स्त्रियाँ ही रही हैं। चीनियों को वे काफिर समझते हैं। काफिर के साथ उनकी जाति की स्त्री सम्बन्ध रखे, तो इसकी सजा मौत के अलावा और कुछ नहीं है। क्रुद्ध मलयवासी एक बार उस स्त्री. को चेतावनी देगा, फिर न मानने पर उसका काम तमाम कर देगा। यदि वह चीनी मुसलमान हो जाये तो वह कत्ल नही किया जायेगा। परन्तु उसके उस प्रकार धर्म परिवर्तन कर देने पर इस जोड़ी को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जायेगा। यदि कोई मलयवासी किसी चीनी स्त्री से विवाह कर ले तो किसी को कोई गम्भीर एतराज न होगा। मगर ऐसा होता बहुत कम है।

मलय देश की सर्व प्रसिद्ध अभिनेत्री
मारिया मेनाएडो

उत्सव के अवसरों पर विवाह हो, कर्णछेद हो, किसी के सरकारी पद पाने का अवसर हो, दावतें देने और जश्न मनाने की प्रथा है। इन अवसरों पर मलयवासी अपनी स्त्रियों और बेटियों को साथ लेकर आते हैं। निमंत्रित लोग अपने सम्बन्धियों को भी साथ ला सकते है। इस समय उत्सव की सारी व्यवस्था स्त्रियाँ करती हैं। अक्सर हफ्तों ये उत्सव चलते रहते हैं। भोजन बनाने तथा परोसने की जिम्मेदारी भी उन्हीं की होती है। इस समय वे खास तरह के कपड़े पहिनती हैं।

मलय देश की गरीब घरों की लड़कियाँ बचपन से काम-काज सीखने लगती हैं। पौधा रोपना, खेत निराना, पानी देना, फसल काटना, धान कूटना--सब काम वे धीरे-धीरे जान लेती हैं। थोड़ी-सी लड़कियाँ पढ़ने-लिखने के लिए भी समय निकाल लेती हैं। अब तो मलय राज्य-संघ में लड़कियों के लिए कई पाठशालाएँ खुल गयी हैं। वहाँ सत्रह से बीस वर्ष के बीच लड़कियों की शादी हो जाती है। चौदह-पन्द्रह वर्ष की उम्र में बहुत कम शादियाँ होती हैं। विवाह के पहिले वे मर्दों से बातें नहीं करतीं। घर के बाहर अकेली नहीं जातीं। रास्ते में यदि किसी मर्द का सामाना हो गया तो सहज संकोच एवं लज्जा के कारण अपना मुँह ढक लेती हैं।

विवाह-प्रथा

अँग्रेजी शासन के पहिले लड़के-लड़कियों की राय विवाह के सम्बन्ध में नहीं पूछी जाती थी। अब धीरे-धीरे स्थिति बदल गयी है। अब लड़कियों की शादी उनकी मर्जी के खिलाफ़ नहीं की जाती। यह बात ऊँचे परिवारों के लिए अधिक सही है। गरीब घरों में शादियों में उतनी कठिनाई नहीं होती,

जितनी बड़े घरों में, क्योंकि विवाह की प्रथा और पद्धति तथा तत्सम्बन्धी लोकाचारों में अत्यधिक व्यय होता है, बहुत अधिक श्रम और समय खर्च होता है। विवाह के समय चावल विखेरने और अक्षत देने की प्रथा है। विवाह के उपलक्ष्य में अन्य उपहारों के साथ धन का आदान-प्रदान भी होता है।

ग़रीबों के यहाँ लड़कियों की विदाई विवाहोपरान्त हो जाती है। परन्तु रईसों के यहाँ विवाह के बाद महीनों अपनी ससुराल में रहा जाता है। उसे अपनी ससुराल से जल्दी छुट्टी नहीं मिलती। अक्सर लड़की अपने माँ-बाप के पास ही रह जाती है और उसे छोड़कर दूल्हा चला जाता है। दो-तीन बार ससुराल आने के बाद ही वह लड़की की विदाई के लिए अपने सास और ससुर को तैयार कर पाता है। लड़कियाँ माँ-बाप को जल्दी नहीं छोड़ पातीं। वे नैहर और ससुराल में लगभग बराबर ही रहती हैं।

मुस्लिम प्रथा के अनुसार मलयवासी पुरुष यदि चाहें तो चार तक विवाह कर सकता है। अक्सर वह ऐसा करता भी है। चारों औरतों में से एक को प्रधानता मिलती है। दूसरी औरतों का तलाक हो सकता है पर उसका तलाक नहीं हो सकता। जो व्यक्ति चार शादियाँ करता है उसे चारों के लिए अलग-अलग रहने-खाने-कपड़े की व्यवस्था करनी होती है। उसको समान रूप से सबकी देखभाल करनी पड़ती है और सबकी जरूरतें पूरी करनी पड़ती हैं। इस सिद्धान्त को सभी लोग पूरी तरह अमल में नहीं ला पाते। परन्तु ऐसे मलयवासी हैं जो ईमानदारी से ऐसा करने की कोशिश करते हैं।

धर्म और लोकाचार

यह बात निर्विवाद है कि मलयवासी मूलतः भारतीय हैं। सन् १२७६ ई० में मलक्का में सुल्तान मुहम्मदशाह का राज्य था। उस समय मलय देश ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया। इस्लाम धर्म स्वीकार करनेवाले मलयवासी भारतीय थे और उनमें मूल मलयवासी घुल-मिलकर एक हो गये थे। आज भी पेराक प्रान्त में पुराने विश्वासों की मान्यता है। आज भी वे भूत-प्रेत भगाने के लिए संस्कृत मंत्रों का उच्चारण करते हैं। सिंगापूर के और मलय देश के अगणित स्थलों के शुद्ध संस्कृत और अपभ्रंश नाम अब भी चल रहे हैं। राजा, मंत्री, कुमार, पुत्र आदि शब्द ज्यों के त्यों बने हुए हैं।

मलयवासी शरीयत के अनुसार चलते हैं। मौलानाओं और धर्म-गुरुओं को वे अब भी महत्व देते हैं। कुरान शरीफ़ का पाठ करते हैं। उनके यहाँ ब्याह-शादी और मरनी-करनी

कब्र पर फातिहा पढ़ती मलय देश की पर्दानशीन औरतें

मुस्लिम प्रथा के अनुसार ही होती है। ख़तना होता है। वे सारे नियम और उसूल काम में लाये जाते हैं जिनका पालन धर्मभीरु मुसलमान के लिए आवश्यक है।

मलयवासी का सबसे प्रिय हथियार 'क्रिस' है। बिना इसके वह रह नही सकता। वह अपनी स्त्री-बच्चों से भी अधिक अपनी 'क्रिस' को प्यार करना है। वह इसे किसी भी क़ीमत पर देने को तैयार न होगा। वहाँ एक कहावत है जिसका अर्थ है कि दाम हो तो सोना खरीदा जा सकता है, परन्तु 'क्रिस' नहीं खरीदा जा सकता। वह इस हथियार का अपमान
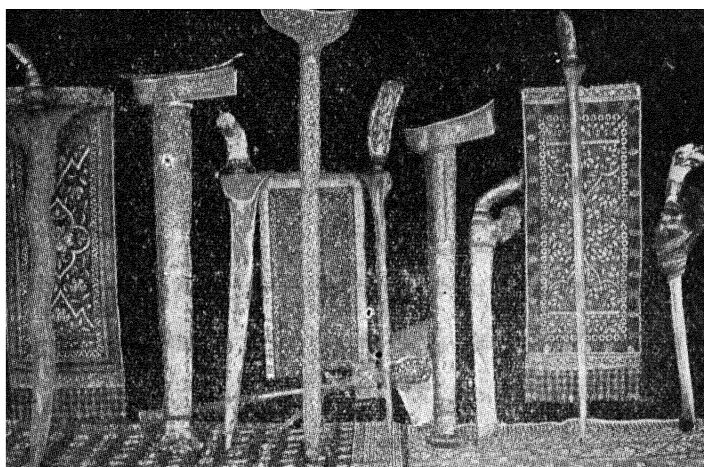
पेरक के रत्नजटित कटार और उनके म्यान

किसी भी तरह नही सह सकता। इसमें उसका प्राण बसता है।

मलयवासी खाने-खिलाने, उत्सव-आनन्द मनाने, घूमने-फिरने का शौकीन होता है। ब्याह-शादी अथवा कोई अन्य अवसर हो उसके यहाँ मेहमानों का ठट्ठ लग जाता है। निमंत्रित मेहमान अपने साथ इष्ट-मित्रो और गाँववालों को भी ला सकते हैं। एक बार दोपहर में भोज होता है, दूसरी बार शाम को। अतिथि और आतिथेय साथ ही गोलाई में फर्श पर बैठते है। अन्त में वे मीठी चीजें खाते हैं। चाय अथवा काफी से भोज

समाप्त होता है। तब सिगरेट, फिर पान का दौर चलता है। पान को वह 'सिरह' कहते हैं।

भोजन के उपरान्त अतिथि नाटक, छाया-नाटक आदि देखने अथवा शतरंज खेलने या जुआ खेलने चले जायेंगे। इस बीच नौकर-चाकर छोटे वर्ग के लोगों को खाना परोस देंगे। उधर औरतें पर्दे के पीछे खाने चली जायेंगी।

साधारण अवसरों पर भी मेहमानों, राहगीरों और अपरिचितों को भोज देने की प्रथा मलय देश में है। उस समय किसी का भी परिचय पूछना असभ्यता समझी जाती है। दस्तरखान के सामने जो आया वह मेहमान है, पूज्य है—भले ही वह परिचित हो या अपरिचित।

प्रकृति-प्रेम

मलय जाति के लोग स्वभावतः प्रकृति-प्रेमी होते हैं। अक्सर वे इष्ट-मित्रों के साथ हाथियों पर बैठकर या नाव में होकर घने जंगलों में चले जाते हैं। वहाँ किसी स्वच्छ झरने के पास डेरा डालते हैं, घण्टों मछली का शिकार करते हैं, तैरते हैं, आग जलाकर चावल पकाते हैं, मछली भूनते हैं और केले या नारियल के पत्ते पर परोसकर खाना खाते हैं। ऐसे अवसरों पर स्त्री-पुरुष में किसी भी प्रकार का पर्दा नहीं होता।

पेरक-निवासी मलय लोग तो इन जंगलों के पीछे पागल रहते हैं। प्रत्येक श्रेणी और वर्ग का पेरक-निवासी मलय जंगलों की सैर करने में आनन्द लेता है। सुल्तान के घराने के लोग और उनके सम्बन्धी हफ़्तों इन जंगलों में पड़े रहते हैं।

यह सही है कि साधारण मलयवासी को पेट भरने के लिए भोजन मिल जाता है। परन्तु वह सम्पन्न नहीं कहा जा

सकता। उसकी झोपड़ी छोटी, गन्दी, विपन्नता का स्थायी अड्डा होती है। उसको सजाने अथवा उसमें आवश्यकता से अधिक सामान रखने का प्रयत्न नहीं किया जाता। उसका फ़र्श जमीन से चार-पाँच हाथ ऊपर उठा होता है। वह बाँस या पटरों का बना होता है। उसके ऊपर चटाई बिछी होती है। दीवारें पटरों की, या पत्तों की या बेत की चटाइयों की होती हैं। छाजन भी पत्तों का ही होता है। इन झोपड़ियों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। सामने बरामदा होता है। उसके पीछे कमरा होता है, जो मुख्य निवास के लिए होता है। इसी के पीछे रसोईघर होता है। बड़े घरों अथवा सम्पन्न झोपड़ों की भी बनावट प्रायः ऐसी ही होती है। अतिथि लोग बरामदे तक ही प्रवेश पा सकते हैं। भीतर तो वे विशिष्ट अवसरों पर ही जा सकते हैं।

स्वभाव

मलयवासी सच्चा, स्वामिभक्त और बहुत ईमानदार होता है। स्वामिभक्ति उसके धार्मिक विश्वास का एक अनिवार्य अंग है। वह मेहमानवाज़, उदार और फजूलखर्च होता है। उसकी बुद्धि अत्यन्त तीव्र होती है। वह तुरन्त अनुकरण कर सकता है। वह खेल, कूद और शिकार में बहुत दक्ष होता है। वह प्रतियोगिता और प्रतियोगी की प्रशंसा करना जानता है। वह ईर्ष्यालु नहीं होता। विनोदप्रिय भी होता है। अपरिचितों से गम्भीर और मितभाषी रहता है। मित्रों के साथ उसका व्यवहार सौजन्य और सहानुभूतिपूर्ण होता है।

यदि उसके पास कोई अच्छा हथियार है, तो उसे देखने के लिए माँगना अशिष्टता है। यदि आपसे यह गलती हो गयी और उसने आपको अपना हथियार दे दिया तो आप उसे

उसी व्यक्ति के सामने खोलने अथवा म्यान से बाहर निकालने की कोशिश मत कीजिए। पहिले इसके लिए उसकी अनुमति माँग लीजिए। अनुमति मिल जाने पर उसे सलाहियत से खोलकर देखिए और फिर ज्यों-का-त्यों रख दीजिए।

मलयवासियों में अपरिचितों के सम्बन्ध में सही अनुमान लगाने की अद्भुत क्षमता होती है। वे कभी भी भोजन के सम्बन्ध में बात नहीं करते। मलय की स्त्रियों के सम्बन्ध में एक बड़ी विचित्र बात यह है कि वे दूसरी स्त्रियों के कपड़ों के सम्बन्ध में चर्चा नहीं करतीं। न वे प्रशंसा ही करती हैं, न शिकायत ही। इस सम्बन्ध में उनका यह मौन सार्थक होता है और सभ्यता तथा शालीनता का लक्षण माना जाता है।

मलय लोगों को बातों को गुप्त रखने का अभ्यास नहीं है। ऐसी बातें भी गोपनीय नहीं रह पातीं जिनका जिन्दगी और मौत से या किसी की इज्जत से सम्बन्ध हो। परन्तु अपनी जाति के लोगों के बाहर वे अपनी बातों को नहीं पहुँचने देंगे—चाहे इसका जो भी मूल्य इन्हें चुकाना पड़े।

मलय जाति के लोग मस्तिष्क से अधिक हृदय के निर्देश पर चलते हैं। जिस व्यक्ति को वे पसन्द करेंगे, उसके कहने पर वे मौत के घाट उतर जायेंगे। औचित्य-अनौचित्य का ध्यान उन्हें लेश-मात्र भी न होगा। राजा या सरदार का हर हुक्म ईश्वरीय आज्ञा की भाँति उन्हें मान्य होता है। परम्परा से ही वे स्वामिभक्त रहे हैं। इस परम्परा को वे छोड़ना नहीं चाहते। ऐसा न करना वे धोखा (द्राखा) समझते हैं। धोखा की केवल एक सजा है—मौत और अपमान! लेकिन अब सुल्तान-भक्ति कम होती जा रही है।

मज़दूर और किसान

मलय देश में मज़दूरों की संख्या बहुत कम है। वहाँ भारतीय और चीनी मज़दूरों की संख्या अत्यधिक है। इसका कारण सारे मलय देश में बहु प्रचलित बेगार की प्रथा है। यद्यपि मुस्लिम शरह के अनुसार गुलामी प्रथा वर्जित है, परन्तु मुस्लिम मलय देश में यह प्रथा परिवर्तित रूप में चली आयी है। शासक और सम्पन्न लोगों ने सदैव ही कर्ज़ देकर एक ऐसे वर्ग को कायम रखा था जो बिना पारिश्रमिक के, बिना किसी प्रकार की शर्त के अपने स्वामियों की सेवा करता रहा है।

यह सोचना कि सभी सुल्तान और राजा आर्थिक दृष्टि से पूरी तरह सम्पन्न थे, ग़लत है। समाज में इनकी प्रतिष्ठा और धाक तो थी, परन्तु इनमें से अधिकतर ऐसे थे जो चीनी महाजनों से कर्ज़ और आर्थिक सहायता लिया करते थे। राजाओं की भी बड़ी दुर्दशा थी।

पेरक में राजाओं की संख्या बहुत बड़ी थी। मर्द, औरत, लड़का, लड़की, नाती, पोता—सभी को राजा की उपाधि प्राप्त थी। न तो ऐसे राजाओं की कोई सूची थी, न कोई कोष था, न लगान की वसूलयाबी ठीक ढंग से होती थी, कर के नाम पर जो कुछ वसूल होता था उसका कोई हिसाब-किताब न था। किसी को कर वसूल करने का हक मिला हुआ था, किसी का खानों में हिस्सा था, किसी को कोई भूमि विशेष दे दी गयी थी। मनमाना वसूली होती थी, मनमाना खर्च होता था। इन राजाओं के अगणित सम्बन्धी और लग्गू-भग्गू होते थे जो राजा की हाँ-में-हाँ मिलाना ही अपना पेशा समझते थे। ये

लोग हमेशा राजा का हुक्म बजा लाने के लिए प्रस्तुत रहते थे। सरदारों और सामन्तों के यहाँ भी यही हाल था।

कला और शिल्प

मलयवासियों की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे आवश्यकता से अधिक परिश्रम नहीं करना चाहते। प्रकृति ने उनको बहुत-सी सुविधाएँ प्रदान कर दी हैं। न तो उसे अत्यधिक ठंड से अपना बचाव करना पड़ता है, न उसको भूखों मरने के लिए मजबूर होना पड़ता है। खाने के लिए उसे केवल चावल चाहिए जो थोड़े से परिश्रम या थोड़े से दाम से प्राप्त हो जाता है।

यह सही है कि एक मलय सख्त परिश्रम लगातार नहीं कर सकता। चाहे हाथ का काम हो या दिमाग का, वह धीरे-

खालिस सोने की पेटी--प्राचीन मलय कला
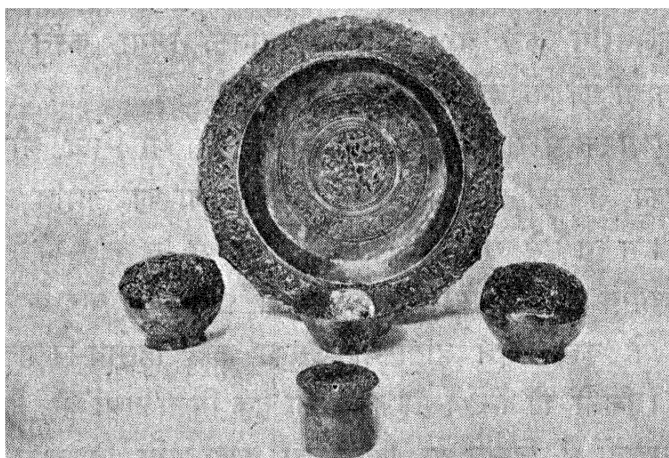
धीरे इत्मीनान से काम करता है। यदि उसे समय और सुविधा दी जाये तो वह अत्यन्त सुन्दर और कलापूर्ण वस्तु तैयार कर

सकता है । कलापूर्ण सुन्दर वस्तुओं को बनाने की उसकी परम्परा अत्यन्त प्राचीन है । एक समय था जब कि इस कला में मलयवासी किसी भी एशियाई देश के शिल्पी से पीछे नहीं था । कीमती पत्थरों, चाँदी, सोना का काम, अष्टधातुओं तथा मिश्रित धातुओं का काम करने में वह दक्ष था ।

कमल कटोरी

कला के अगणित उत्कृष्ट नमूने अब भी देखने को मिलते हैं । चाँदी के कटोरे और तश्तरियाँ वे बहुत अच्छी बनाते हैं । सन्दूक और पिटारे तथा हर प्रकार और आकार के बर्तन भी बनाते हैं । सोने और हीरे-जवाहरात के जड़े इत्रदान, जंजीरें, कान के बाले, कंघियाँ, क्लिप, बाल के पिन, झालरें, पेटियाँ, म्यानें आदि जैसी इस देश में बनती हैं उनकी मिसाल नहीं ।

मलय देश का एक सूबा लिगोर था जिसे कुछ वर्षों पहले थाईवासियों ने जीत लिया था । वहाँ 'शूतम' अथवा 'जादम' नाम का एक विशेष प्रकार का बर्तन बनता था । बाद में वह मलय देश के दूसरे प्रान्तों में भी बनने लगा । पहिले चाँदी का बर्तन या तश्त तैयार करके उसे खास रूप दे देते हैं । उसके ऊपर

सोने की चादर चढ़ा देते हैं। जहाँ-जहाँ गढ़े पड़ जाते हैं वहाँ काली पालिश चढ़ाकर दूसरे भागों को अच्छी तरह चमका देते
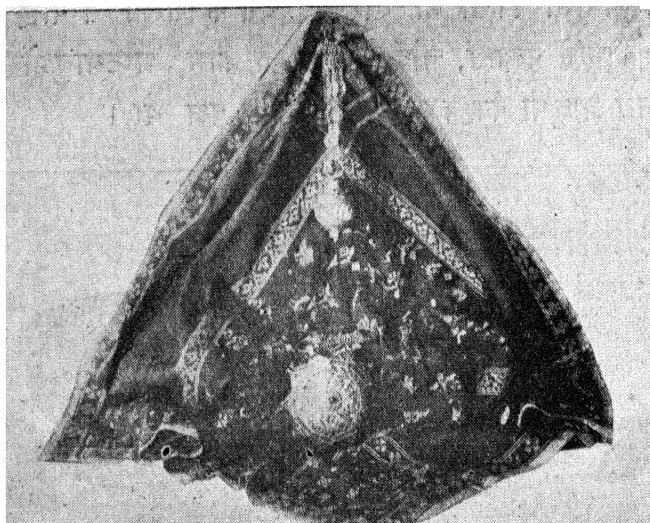
सोने की जंज़ीर और लम्बी गर्दनवाला गुलाबदान

हैं। इस प्रकार सोनेवाला हिस्सा भी उभर आता है और जगमागाता रहता है।

लोहारों ने भाले, कटारें, क्रिसें, छुरे तथा अन्य नुकीले औजारों के बनाने में दक्षता प्राप्त की। उनके सरौते और कैंचियाँ बहुत अच्छी होती थीं। ये सारी वस्तुएँ विशेषतया पेरक प्रान्त में और साधारणतया अन्य प्रान्तों में भी बनती थी। गँडासे, फरसे वगैरह पेरक और केडाह में बहुतायत से बनते थे।

लकड़ी का काम तो मलय देश के सभी प्रान्तों में होता है। लकड़ी की ये नक्काशीदार वस्तुएँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। अनुमान है कि लकड़ी के काम की यह कला मलय देश में सुमात्रा से आयी थी।

मलय देश के अनेक राज्यों में कताई, बुनाई और कढ़ाई का काम होता है। यह शिल्प महिलाओं का है। वे अपने काम
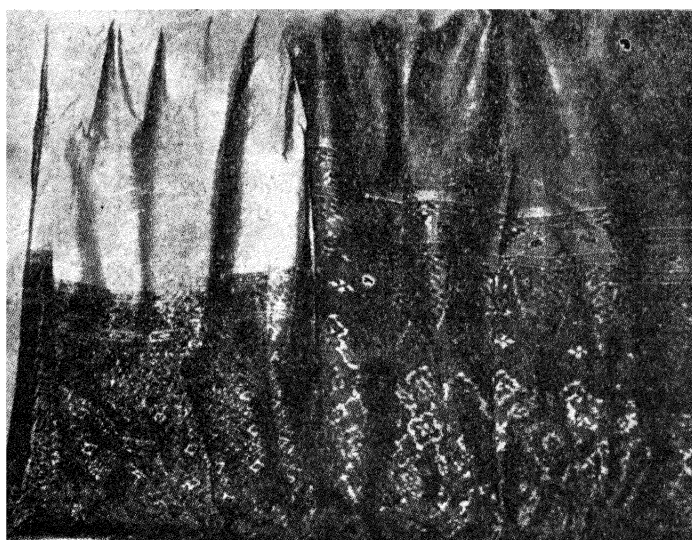
रेशम के बने हुए शाल

में पूर्णता प्राप्त कर चुकी हैं। इन राज्यों में प्रायः हर घर में करघे हैं। औरतें इन करघों से रेशमी और सूती कपड़े तैयार करती हैं। हर वर्ग की औरतें इस काम को करती हैं। पेरक की स्त्रियों को इस बात का गर्व है कि जितनी अच्छी बुनकरी वे कर लेती हैं, कढ़ाई का काम जितना अच्छा वे कर सकती हैं और चटाइयाँ जितनी अच्छी वे बना लेती हैं उतनी अच्छी किसी अन्य प्रान्त की स्त्रियाँ नही बना सकती। केडाह की स्त्रियाँ 'पन्दानुस' के रेशों से बड़ी अच्छी डोलचियाँ बनाती हैं। वे रेशम और सूत के ताने-बाने से बहुत अच्छा कपड़ा भी तैयार करती हैं। कोई समय था जब कि सेलंगार किमखाब और सोने

के तारों के अत्यन्त उत्कृष्ट और मनोहारी सारंग बनाने के लिए प्रसिद्ध था। परन्तु युद्धों के कारण उसका यह उद्योग नष्ट हो
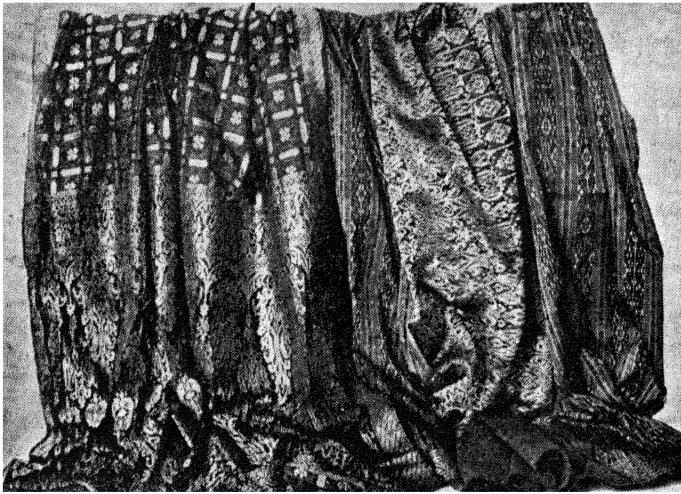
रेशम और सोने के तार से बने सारंग

गया। पाहंग में स्त्रियाँ अनेक रंगों को मिलाकर नयनाभिराम चटाइयाँ बनाती हैं। रेशम का काम भी पाहंग में बहुत अच्छा होता है। त्रेगांनू तथा पड़ोसी प्रान्त केलान्तान में सर्वोत्कृष्ट बुनाई का काम होता है।

भाषा और साहित्य

मुसलमान होने के पहिले मलयवासियों के पास अपने कुछ अक्षर थे। मुसलमान होने के बाद उन्होंने अरब अक्षरों और वर्णमाला को अपना लिया। साथ ही उसमें छह अक्षर और जोड़ दिये। इन अक्षरों के बढ़ाने से उन स्वरों का भी उच्चारण हो सकता है जो अरबी में नहीं थे। शुद्ध अरबी शब्दों को लिखने के लिए केवल तेरह अक्षरों की आवश्यकता होती है। परन्तु

अरबी के अतिरिक्त जब वे मलय शब्दों को लिखने लगते हैं तो बीस और अक्षरों की जरूरत होती है। मलय की लिखावट भी दाहिनी ओर से बायीं ओर चलती है। परन्तु मलय भाषा में दो अक्षरों के बीच अन्तर नहीं होता, अर्धविराम, पूर्णविराम प्रश्न-वाचक और आश्चर्य आदि के चिन्ह नहीं होते। स्वर तो प्राय: लिखे ही नहीं जाते। उदाहरण के लिए एक शब्द 'मिनता' है उसे 'मनत' लिखा जायेगा।

मलय भाषा व्याकरण के नियमों से बोझिल नहीं है। इसे आरम्भ में रटना पड़ता है। मलय भाषा मुहावरों की भाषा है। मलयवासी उपमाओं, उदाहरणों, कहावतों और मुहावरों में ही बात करते हैं। सीधे शब्दार्थ से काम नहीं चलता, बल्कि परिस्थिति-विशेष को ध्यान में रखते हुए शब्दों की व्यंजना समझनी पड़ती है, भावार्थ को पकड़ना पड़ता है।

मलय भाषा के अक्षरों का आधार अथवा मूल रूप क्या है इसके सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद रहा है। परन्तु अधिक-तर विद्वान मलय अक्षरों पर नागरी अक्षरों का स्पष्ट प्रभाव स्वीकार करते हैं।

भारतीय लोग तालपत्र पर लिखते थे। मलय में भी प्राचीन भारतीय और मलयवासी तालपत्रों का प्रयोग करते थे। इसे वे लोग तार कहते थे। 'लोन' जावा के शब्द 'रोन' का अपभ्रंश है जिसका अर्थ पत्र है। 'तार' संस्कृत के शब्द 'ताल' का अपभ्रंश है। इससे यह भी साबित होता है कि इस तालपत्र का लिखने के लिए प्रयोग भारतीयों ने ही सिखाया। तालपत्रों, वृक्षों के छिलकों आदि पर ये लोग लोहे से अक्षर लिखकर उस पर पिसा कोयला बिछा देते थे।

जावा में कलम और रोशनाई को 'सुश्रा' और 'मंसि' कहते हैं। अरबों ने वहाँ 'कलम' और 'दावात' शब्द पहुँचाये। कहीं-कहीं ये शब्द बिगड़कर 'कलह' और 'दवाक' बन गये। यहाँ के भारतीय प्रवासी कागज (करतस) जानते थे।

मलय देश की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि वहाँ की स्थानीय संस्कृति कभी भी पूर्णतया विकसित नहीं हो सकी। आरम्भिक काल में लगभग बारह सौ या चौदह सौ वर्षों तक भारतीय प्रवासियों का आधिपत्य रहा। उसके बाद यहाँ अरब लोग आ जमे। उन्होंने अपनी भाषा और अक्षरों को चलाया। मलयवासियों की भाषा में संस्कृत और अरबी का प्रभाव बढ़ा। उसके बाद यहाँ पुर्तगाली, डच और अँग्रेज आये। चीनियों, बर्मावालों और थाईलैंड के निवासियों का यहाँ आना-जाना लगा ही रहता था। फलतः मलय जाति का निजी सांस्कृतिक विकास बहुत कम हुआ। उसकी संस्कृति विदेशी प्रभावों में ही पली और विकसित हुई।

यह बड़ी विचित्र बात है कि यद्यपि मलयवासियों को पढ़ने-लिखने का बहुत शौक है, वे कुशाग्र बुद्धिवाले, अध्यवसायी और कला-प्रेमी होते हैं, परन्तु मलय भाषा में उत्कृष्ट साहित्य की कमी है। मलयवासियों में कुछ प्राचीन पुस्तकें लोकप्रिय हैं जैसे शतर-ए-मलायु, हिकायाते हांग तुआ, ताज अल सलातीन, हिकायाते इस्कन्दर मुदा, बेसताम्म और होजा मेमम। अनेक भारतीय और फ़ारसी कहानियों के अनुवाद भी मलय भाषा में मौजूद हैं। कुछ समय पहिले अब्दुल्ला नाम के एक व्यक्ति ने एक आत्मकथा लिखी थी जो कि बहुत प्रसिद्ध हुई।

प्रकृति-प्रेमी, भावुक मलयवासियों का लोक-साहित्य

हृदयग्राही, रस-सिक्त, करुण एवं शृङ्गारिक होता है। नाव चलाता हुआ, चाँदनी से धुली रात में प्रेम की पुकार करता
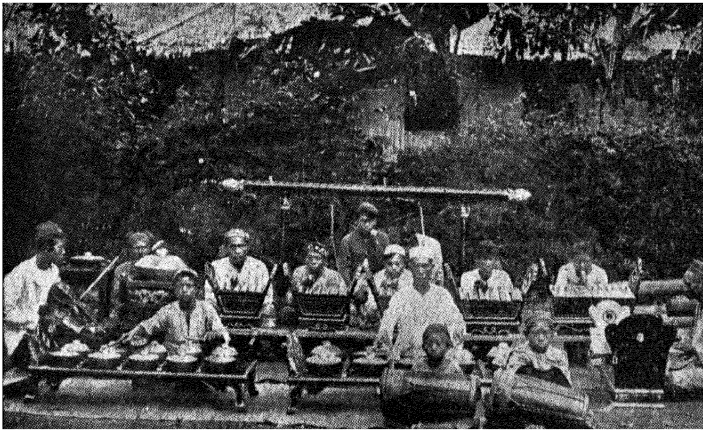
मलय वृन्द-वादन

हुआ मलय तरुण अपनी वियोग-व्यथा अपनी प्रेमिका तक पहुँचाता है और जब वह यह पुकार सुनती है तो उसका हृदय और उसकी आँखें एक साथ बरस पड़ती हैं। और वह रुँधे गले से गा उठती है : "केले का पेड़ चाहे जितना ऊँचा हो, आग का धुआँ उसके ऊपर उठकर जाता है। पर्वत-श्रेणियाँ चाहे कितनी भी ऊँची हों, मेरे हृदय की कामना उससे भी ऊँची है, उसे पार करके तुम्हारे पास पहुँच सकती है।" या वह विवशता प्रकट करते हुए कहती है—"जंगल में सेनुदोह की झाड़ियाँ उग रही हैं। करघे पर ताने-बाने उलझ गये हैं। यह सही है कि मैं तुम्हारी गोद में बैठी हूँ—मगर इसके आगे अभी नहीं (अभी मैं कुमारी कन्या हूँ, विवाह होने के पहिले इसके आगे बढ़ने से मर्यादा टूटेगी) !"

अभिनव मलय देश अब नयी परिस्थितियों और नये सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवेश में अब नये साहित्य का सृजन करेगा जो उसके जातीय गौरव और ऐतिहासिक परम्परा के अनुकूल होगा ।